 ੧ੳ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

आषाढ़-सावन, संवत् नानकशाही ५४१
जुलाई 2009 वर्ष २ अंक ११

संपादक — सिमरजीत सिंह — *एम. ए, एम. एम. सी.*
सहायक संपादक — सुरिंदर सिंह निमाणा — *एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बी. एड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59



एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303
संपादन विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

पत्रिका प्राप्त न होने पर तथा चंदे आदि सम्बंधी जानकारी प्राप्त करने के लिए मोबाइल नं. 98886-38618 पर भी सम्पर्क किया जा सकता है।

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

सावणि सरसी कामणी चरन कमल सिउ पिआरु ॥
मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु ॥
बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु ॥
हरि अंम्रित बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु ॥
वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ संम्रथ पुरख अपारु ॥
हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु ॥
जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार ॥
नानक हरि जी मइआ करि सबदि सवारणहारु ॥
सावणु तिना सुहागणी जिन राम नामु उरि हारु ॥६॥ *(पन्ना १३४)*

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी महाराज बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में सावन मास की सुहानी ऋतु और इससे संबंधित प्राकृतिक और सांस्कृतिक दृश्य चित्रण तथा बिंबावली के प्रसंग में आत्मा की प्रभु-मिलाप की लोचा के साथ-साथ गुरमति मार्ग के अनुरूप इसके लिए दिशा-निर्देश बख्शिश करते हैं।

गुरु जी कथन करते हैं कि सावन में जैसे वनस्पति रस से भरपूर हो जाती है वैसे ही रूहानी मार्ग पर चलने वाली जीव-स्त्री के प्रभु-भक्ति के मार्ग में भी ऐसा ही पड़ाव आता है जब उसका प्रभु के कमल रूप सुंदर चरणों के साथ प्यार बन जाता है अथवा उसे प्रभु-चिंतन-मनन में रस प्रतीत होने लगता है। उसका मन उस सदैव स्थिर मालिक के रंग में रंगा जाता है और वह उसी एक के नाम को अपने जीवन का आधार बना लेती है। उसे सांसारिक विषय-विकारों के रंग के झूठा अथवा अस्थायी होने का आभास हो जाता है और ये उसे राख-रूप प्रतीत होते हैं। उसको प्रभु-नाम-रूप अमृत बूंद के सुहावनी होने का अनुभव होता है और यह साधु-जनों की संगत में ही पी जा सकती है, का तथ्य ज्ञात हो जाता है।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि जिस प्रभु के साथ से सभी वनस्पति का विगास होना है, क्षमता वाला वही है जिसका अंत मनुष्यमात्र नहीं पा सकता। ऐसे सक्षम प्रभु को मिलने के लिए मेरा मन लोचा करता है, परंतु वह मात्र लोचा से नहीं बल्कि उसी की कृपा से मिलता है। जीव-आत्मा महसूस करती है कि उसने अभी मालिक को पाया नहीं परंतु जिन भाग्यशाली जीव-स्त्रियों ने उस मालिक को प्राप्त कर लिया है उन पर मैं सदैव बलिहार जाती हूं। गुरु जी कथन करते हैं कि हे प्रभु! मुझ निमाणी पर भी मेहर करो, गुरु-शबद द्वारा आप मेरी तकदीर संवारने वाले हो। सावन का महीना उन भाग्यशाली जीव-स्त्रियों के लिए ही शीतल व सुहावना है जिन्होंने अपने हृदय-रूप गले में प्रभु-नाम-रूपी हार पहन लिया है।





उचित समतोल को स्थापित करने में सहायक मीरी-पीरी का गुरमति सिद्धांत

मानवी जीवन में समतोल अति जरूरी है। समतोल ही है जो हमें अपने कदमों पर खड़े रखता है। समतोल बिगड़ जाने पर हम गिर जाते हैं और चोटें खाते हैं। व्यक्तिगत जीवन-क्रियाओं को बिना रुकावट जारी रखने और पारिवारिक एवं सामाजिक संबंधों को कायम करने तथा बनाये रखने में समतोल का बहुत बड़ा हिस्सा है। कौमों की बिगड़ चुकी तकदीरें पुन: संवर सकती हैं, मुर्दा हुई कौमों में से नयी ताजगी भरी कौमों का निर्माण हो सकता है और ये मंजिलें बिगड़ चुके समतोल को पुन: कायम करने में छुई जा सकती हैं। गुरु नानक पातशाह ने हिंदोस्तानियों के सदियों से बिगड़े हुए समतोल को कायम करके एक अत्यंत दबी-कुचली कौम को पुन: उभारा, पाताल में गिर चुकी कौम को वहां से उठा कर धरती पर उसके कदम टिकाये और उसके रूहानी तथा सदाचारक गुणों को आकाश को छूती बुलंदियों पर ले गए। गुरु जी ने सृजित कौम सिख समुदाय को समस्त विश्व के उत्थान व विकास हेतु समर्पित बनाया।

मीरी-पीरी का गुरमति सिद्धांत ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो हमें गुरु नानक साहिब की रूहानी गुरगद्दी के छठे उत्तराधिकारी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी द्वारा बख्शिश किया प्रतीत होता है, परंतु जरा अधिक गहरी विश्लेषक दृष्टि से देखें तो ज्ञात होता है कि मीरी-पीरी के सिद्धांत के बीज गुरु नानक साहिब के द्वारा बख्शे गुरमति दर्शन में ही विद्यमान थे। छठे पातशाह गुरु हरिगोबिंद साहिब के समय उन बीजों के अंकुरित होने का अनुकूल माहौल बन गया। जो इतिहासकार मीरी-पीरी सिद्धांत का अवलोकन छठे पातशाह जी के नये और अलग सिद्धांत के रूप में करते हैं वे सिख इतिहास और गुरमति विचारधारा दोनों से अपने वास्तविक परिचय के अभाव को दर्शाते हैं।

गुरमति का अथवा सिख धर्म का मीरी-पीरी का सिद्धांत कहता है कि अमीरी और धार्मिकता साथ-साथ चलते हैं। अमीरी धार्मिकता के मार्ग की कोई बाधा नहीं है बल्कि यह तो धर्म को उभारने, इसके विकास व विगास में मददगार है। यह सिद्धांत कहता है कि आन-शान से जीवन-यापन करते हुए मनुष्य-मात्र प्रभु-भक्ति कर सकता है। अत: हमें समाज में, राजनैतिक-सामाजिक-सांस्कृतिक प्रबंध में अपने व्यक्तिगत और कौमी सम्मान को कायम रखना चाहिए। समय के राजनैतिक प्रबंध की अनियमितताओं के आगे घुटने न टेकते हुए निजगत आत्म-सम्मान और कौमी सम्मान को हर स्थिति में कायम करना प्रत्येक नानक नाम-लेवा सिख के लिए अनिवार्य है। यह स्मरण रहे कि तत्काली मुगल शासन प्रबंध में हिंदोस्तानी कौम आत्म-सम्मान से रहित जीवन गुजार रही थी। उसे अपने निज धर्म को अपनाये रखने के बदले में जजिया अथवा कर देना पड़ता था। वह सिर पर पगड़ी नहीं पहन सकती थी।

हिंदोस्तानियों के लिए घोड़े की सवारी करने की मनाही थी। वे आत्म-रक्षा के लिए शस्त्र

भी नहीं रख सकते थे। उनका जीवन विवशता एवं लाचारी की एक करुण कथा था। उनकी बहू-बेटियां सुरक्षित न थीं। कुछ हिंदोस्तानी आत्म-सम्मान के भाव से हीन होकर स्वयं विदेशी शासकों को अपनी बहू-बेटियां प्रस्तुत करते थे तो कुछ अन्य ऐसे थे जिनसे उनके सामने उनकी बहू-बेटियां मुगल अधिकारी छीन कर ले जाते थे और वे कुछ भी न कर पाते थे। ऐसी स्थिति को बदलने हेतु सिख धर्म का मीरी-पीरी का सिद्धांत अस्तित्व में आया तथा क्रियाशील हुआ।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने बाबा बुड्ढा जी को गुरु नानक पातशाह के घर की गुरगद्दी पर विराजमान करने की रस्म निभाते समय स्वयं कहा, "बाबा जी, आप हमें अपने हाथों से दो तलवारें पहनायें। एक तलवार मीरी की प्रतीक होगी और दूसरी पीरी की।" सिख इतिहास हमें बतलाता है कि जब श्री गुरु अरजन देव जी महाराज को अपनी शहादत देने के लिए जाना पड़ा तो आपने साहिबजादा श्री हरिगोबिंद साहिब को स्पष्टत: बता दिया था कि आपने आन-शान से जीवन-यापन करना है! शस्त्रधारी होना है और समय की चुनौतियों का ऊंचे साहस और भरपूर शक्ति के साथ सामना करना है। इसी सबंध में गुरु जी ने जहां मीरी-पीरी की प्रतीक दो तलवारें धारण कीं वहां उन्होंने शिकार को भी अपने नित्य कर्म में शामिल किया। सिखों को योद्धे बनाने के लिए ऐसा अनिवार्य समझा गया।

मीरी-पीरी के सिद्धांत को अमल व व्यवहार में क्रियाशील करने हेतु ही गुरु जी ने श्री हरिमंदर साहिब के बिलकुल सामने अपनी व्यक्तिगत निगरानी में बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी के हाथों अकाल बुंगा का निर्माण-कार्य कराया जो श्री अकाल तख्त साहिब के नाम से विश्व विख्यात हुआ। यहां वीर रस से भरपूर वारों का गायन करके सुनाये जाने का क्रम आरंभ किया गया और भाई नत्था तथा भाई अब्दुल्ला नामक ढाढी इस उद्देश्य से विशेष रूप में रखे गए। गुरु जी ने हुक्मनामे भेजे कि सिख अब माया रूप भेटें नहीं लायें। अच्छे घोड़े, अच्छे शस्त्र और जवानियां (नौजवान) भेंट करने हेतु गुरु-फरमान जारी किये गए। सब गुरु-फरमानों पर अमल भी हुआ। गुरु जी के पास सिख शूरवीरों की सेना कायम हो गई। समय-समय मुगल शासक जब-जब आक्रमणकारी हुए तो गुरु जी की अगुआई में सिख सेना ने उनके आक्रमण का मुंहतोड़ उत्तर दिया और हुये चार युद्धों में विजय पाई।

इस प्रकार मीरी-पीरी का सिद्धांत गुरु साहिब के समय भरपूर रूप में अमल-व्यवहार में लाया गया और इससे समय की चुनौतियों का डटकर सामना किया गया। मीरी-पीरी का यही सिद्धांत उत्तर काल में भी यथासंभव सामने रखा जाता रहा। साहिबे-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा सन् १६९९ को खालसा पंथ की साजना के रूप में एक भव्य महल तैयार किया गया।

मीरी-पीरी के सिद्धांत को सिख पंथ ने उत्तर गुरु-काल में यथासंभव पूर्णत: क्रियाशील रखने का हर प्रयास किया है और इस मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं को दूर करने में भी वे प्रयासरत रहे हैं। बेशक समय की सरकारें कितनी भी बड़ी चुनौतियां उत्पन्न करती रही हैं गुरु नानक साहिब द्वारा साजा-निवाजा सिख पंथ इनका टाकरा मीरी-पीरी सिद्धांत से अगुआई लेकर करता आया है और आगे के लिए भी इस उद्यम से कदापि पीछे नहीं हटेगा।



गुरु नानक साहिब की बाणी में प्रकृति-वर्णन

-डॉ. मीना रानी शर्मा*

यह सर्वविदित है कि एक कवि का प्रकृति के साथ अटूट नाता हुआ करता है। वह अपनी भावनाओं एवं विचारों को प्रकृति के उपमानों के माध्यम से अभिव्यक्ति देता है। अगर यह कहें कि प्रकृति का साहित्य व मानव के साथ अटूट नाता है तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। प्रकृति के कण-कण में परमात्मा का प्रकाश-पुंज विद्यमान है, इसलिए हमारे गुरु साहिबान भी प्रकृति के सौन्दर्य को आंखों से ओझल नहीं कर पाए हैं, बल्कि उन्होंने प्रकृति को माता-पिता का दर्जा देकर गौरवान्वित किया है। श्री गुरु नानक देव जी ने कहा है :

पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु ॥
(पन्ना ८)

समस्त गुरबाणी में प्रकृति का अति रम्य, मुग्धकारी, प्रेरक, सौहार्दमयी, मंगलमयी व कल्याणकारी वर्णन हमारे गुरु साहिबान द्वारा किया गया है। श्री गुरु नानक देव जी वाहिगुरु जी के अवर्णनीय, आश्चर्यजनक व कल्याणकारी स्वरूप का दर्शन जब प्रकृति के सौन्दर्य में निहारते हैं तो मदमस्त हो सरूर में गा उठते हैं :

बलिहारी कुदरति वसिआ ॥
तेरा अंतु न जाई लखिआ ॥ (पन्ना ४६९)

गुरबाणी का गहनता से अध्ययन करते हुए विदित होता है कि श्री गुरु नानक देव जी संसार के जर्रे-जर्रे में परम पुरख परमात्मा के दर्शन करते हैं। हवा उन्हें चंवर की तरह प्रतीत होती है जो परमात्मा को चंवर झुलाती है। सारी वनस्पति फूल चढ़ाती है। सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र इत्यादि सब उसकी आरती में जलने वाले दीपक तुल्य हैं : *". . . पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती ॥"* अमृत वेले का शांत वातावरण, धीरे-धीरे से चलते हुए निर्मल हवा के झोंकों व घास पर पड़ी ओस की बूंदें श्री गुरु नानक देव जी को भाव-प्रबंध में शोभा देती हैं और वे उसी भव्य वातावरण में परमात्मा के सिमरन में जुड़ बैठते हैं तथा कर जोड़ उसका (परमात्मा का) धन्यवाद करते हैं:

भिंनी रैणि जिन्हा मनि चाउ ॥ (पन्ना ४६५)

जीवन के अंतिम दिनों में करतारपुर रहते हुए श्री गुरु नानक देव जी ने रावी दरिया के नजारों को प्रत्यक्ष देखा। झंझावात के आने से बेड़ियों का डोलना, डूबना-उतराना और नाविकों द्वारा उनको पार लगाने का प्रयत्न करना श्री गुरु नानक देव जी के लिए प्रेरणास्रोत बन गया। इसी नजारे के रूबरू उन्होंने मनुष्य जीवन रूपी नाव को, संसार को मोह-माया के बंधनों में डोलते पाया। मानव बार-बार प्रयत्न कर अपनी जीवन नैया को भवसागर से पार लगाना चाहता है पर असफल रहता है। श्री गुरु नानक देव जी मनुष्य की विकृत भावों से भरी नाव को संसार-सागर से पार लगाने की राह दिखाते हैं :

झड़ झखड़ ओहाड़ लहरी वहनि लखेसरी ॥
सतिगुर सिउ आलाइ बेड़े डुबणि नाहि भउ ॥
(पन्ना १४१०)

रावी नदी के किनारे लगे आमों के बाग और आमों पर बूर लगने पर बोलती कोयल को

*VPO-बागड़ीयां, जिला संगरूर-१४८२०४

श्री गुरु नानक देव जी परमात्मा के वियोग में कू-कू करती प्रतीत करते हैं। कोयल का कूकना उन्हें ऐसे प्रतीत होता है जैसे वह विरह में तड़प-तड़प कर अपने प्रियतम से मिलने के लिए आतुर हो। श्री गुरु नानक देव जी भी परमात्मा से मिलने के लिए तड़प उठते हैं :

कोकिल होवा अंबि बसा सहजि सबद बीचारु ॥
सहजि सुभाइ मेरा सहु मिलै दरसनि रूपि अपारु ॥ (पन्ना १५७)

सावन के महीने में बादलों की घोर गर्जना सुनकर मोर प्रसन्नता से नाच उठता है। प्रभु की महिमा में रत्ते श्री गुरु नानक देव जी का हृदय भी सावन महीने में आहलादित हो उठता है:

उनवि घन छाए बरसु सुभाए मनि तनि प्रेमु सुखावै ॥
नानक वरसै अंम्रित बाणी करि किरपा घरि आवै ॥ (पन्ना ११०७)

'**बारह माह**' में श्री गुरु नानक देव जी सभी ऋतुओं का वर्णन करते हैं। बसंत और चेत्र के महीने में उन्हें सम्पूर्ण प्रकृति खिली-खिली व प्रसन्न दिखाई पड़ती है। भंवरे गुंजार कर रहे हैं, कोयल की कू-कू की मधुर आवाज अपना अनोखा राग अलाप रही है :

—चेतु बसंतु भला भवर सुहावड़े ॥
बन फूले मंझ बारि मै पिरु घरि बाहुड़ै ॥ (पन्ना ११०७)

—कोकिल अंबि सुहावी बोलै किउ दुखु अंकि सहीजै ॥
भवरु भवंता फूली डाली किउ जीवा मरु माए ॥ (पन्ना ११०८)

श्री गुरु नानक देव जी को ज्येष्ठ-आषाढ़ की कड़कड़ाती धूप भी प्रिय है, चूंकि कंटीले पेड़ पर बैठा पक्षी अपनी तेज आवाज में लगातार टीं-टीं करता रहता है :

आसाड़ु भला सूरजु गगनि तपै ॥ . . .
रथु फिरै छाइआ धन ताकै टीडु लवै मंझि बारे ॥ (पन्ना ११०८)

सावन महीने में मेंढकों की आवाज भी सुंदर राग प्रतीत होती है। मेघ-मालाओं को देखकर मयूरों का नाचना, बंबीहे का बोलना प्रकृति के सौन्दर्य को और भी बढ़ा देता है। परमात्मा से प्रेम करने वाले हृदय इस दृश्य से आहलादित हो गा उठते हैं :

बरसै निसि काली किउ सुखु बाली दादर मोर लवंते ॥
प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा बोले . . . ॥ (पन्ना ११०८)

इसी ऋतु में मच्छर, मक्खियां व सांप भी अपने विष से लोगों को तंग करते हैं। परमात्मा से अलगाव झेलती हुई जीव-स्त्री को कुदरत का यह दृश्य सांप व मच्छरों की तरह डंक मार-मार कर तंग करता रहता है :

प्रिउ प्रिउ चवै बबीहा बोले भुइअंगम फिरहि डसंते ॥
मछर डंग साइर भर सुभर बिनु हरि किउ सुख पाईऐ ॥ (पन्ना ११०८)

रावी दरिया के एक किनारे पर लम्बे-लम्बे घास की फसल उगा करती थी, जिसे अश्वनि ऋतु में फूल लगते थे। इसी समय रातें ठंडी होनी शुरू हो जाती हैं। जीव-स्त्री को अपनी वृद्धावस्था का ज्ञान होता है तो उसे अपनी शारीरिक शक्ति कम होती दिखलाई पड़ती है। लेकिन घास को जंगल का हरा-भरा वातावरण उसे सांत्वना देता है कि तुम्हारा परमात्मा से अवश्य मिलाप होगा :

. . . कुकह काह सि फुले ॥
आगै घाम पिछै रुति जाडा देखि चलत मनु डोले ॥
दह दिसि साख हरी हरीआवल सहजि पकै सो मीठा ॥
नानक असुनि मिलहु पिआरे सतिगुर भए बसीठा ॥ (पन्ना ११०९)

अपने गांव के जंगलों में उछल-कूद करते

मृगों को देखकर उन्हें मनमुखों की याद आती है जो मोह-माया के बंधनों में ग्रस्त होकर संसार में बेमायने घूमते हैं। कभी-कभी उछल-कूद करते मृग शिकारी कुत्तों के आड़े आकर अपनी जान से हाथ धो बैठते हैं। मनुष्य भी ठीक उसी तरह अचानक विपदा के आ जाने पर अपने जीवन को मृत्यु की कगार पर देख दुखी होता है। श्री गुरु नानक देव जी ऐसे मनमुखों की दयनीय हालत का मार्मिक चित्रण करते हैं :

तूं सुणि हरणा कालिआ की वाड़ीऐ राता राम ॥
बिखु फलु मीठा चारि दिन फिरि होवै ताता राम ॥ *(पन्ना ४३८)*

श्री गुरु नानक देव जी ने भंवरों की भी पीड़ाजनक स्थिति को देखा। वह रस के लोभ में फूल की पंखुड़ियों में बंद होकर अपनी जान गंवा बैठता है। फूल का तेल निकालते हुए भंवरे का शरीर भी तेल में ही तल दिया जाता है। भंवरे की दयनीय हालत का वर्णन कर श्री गुरु नानक देव जी मनुष्य को गलत रास्ते से हटाने के लिए प्रेरित करते हैं :

भवरा फूलि भवंतिआ दुखु अति भारी राम ॥
. . . भवरु बेली रातओ ॥
सूरजु चड़िआ पिंडु पड़िआ तेलु तावणि तातओ ॥
(पन्ना ४३९)

जिस तरह अचानक मछली जाल में फंस कर अपनी जीवन-लीला खत्म कर बैठती है ठीक उसी तरह मानव भी बेगाने देश में आकर, अन्य विकारों में ग्रस्त होकर आत्मिक मृत्यु के जाल में फंस जाता है। परम पुरख परमात्मा से मनुष्य को मिलाने के लिए श्री गुरु नानक देव जी मनुष्य को इस तरह समझाते हैं :

मेरे जीअड़िआ परदेसीआ कितु पवहि जंजाले राम ॥
साचा साहिबु मनि वसै की फासहि जम जाले राम ॥
मछुली विछुनी नैण रुंनी जालु बधिकि पाइआ ॥
संसारु माइआ मोहु मीठा अंति भरमु चुकाइआ ॥
(पन्ना ४३९)

मनुष्य जीवन चौरासी लाख योनियों में एक बार प्राप्त होता है, परन्तु जीव अज्ञानतावश उसका लाभ नहीं उठा पाता। जीवन दरिया के पानी की तरह बहता जल है जो एक बार निकल गया फिर दोबारा नहीं आता। इसलिए श्री गुरु नानक देव जी मनुष्य को परमात्मा से मिलने का उपदेश देते हैं कि एक बार जीवन हाथ से निकल गया तो फिर पता नहीं कभी मिलेगा भी कि नहीं :

नदीआ वाह विछुंनिआ मेला संजोगी राम ॥ . .
हरि नामु भगति न रिदै साचा से अंति धाही रुंनिआ ॥ *(पन्ना ४३९)*

हम जैसे-जैसे गुरबाणी के गहरे सागर में गोता लगाते हैं प्रकृति के अनेक बहुमूल्य रत्न प्राप्त होते हैं। ये अमोलक पदार्थ मनुष्य को आध्यात्मिक ऊंचाइयां प्रदान करने की सामर्थ्य रखते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्री गुरु नानक देव जी की बाणी में स्थान-स्थान पर प्रकृति के सुंदर दृश्य मिलते हैं, जिनका प्रयोग उन्होंने मानव का जीवन प्रभु-नाम से जुड़ कर सुखमय बनाने के लिए किया है। प्रकृति जहां अपने आप में अति सुंदर, रमणीक व भव्य है वहीं वह अपनी तरह मानव-जीवन को भी सौन्दर्ययुक्त बना देती है। मनुष्य का अन्त:-करण परिमार्जित करके वह उसे परमात्मा के दरवाजे तक पहुंचाने में सहचरी का कार्य करती है। सर्वविदित है कि आंखों-देखी को प्रमाण की क्या आवश्यकता? श्री गुरु नानक देव जी ने प्रकृति के नजारों को साक्षात देखा व उनका प्रयोग कर मानव-जीवन को सुलभ बनाने का अति लासानी कार्य किया। 

जीवन दर्शन : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म गांव गुरु की वडाली, जिला श्री अमृतसर (पंजाब) में (२१ आषाढ़ सं. १६५२ बिक्रमी) २१ आषाढ़ सं. नानकशाही १२७ तदनुसार १९ जून १५९५ ई को हुआ। आपके पिता श्री गुरु अरजन देव जी ने (गुरु) हरिगोबिंद साहिब की शिक्षा आदि का काम सत्कारयोग्य बाबा बुड्ढा जी को सौंपा। बाबा बुड्ढा जी ने देख लिया था कि आरंभिक अवस्था में ही ये बाल-गुरु, कितने होनहार, तीक्ष्ण बुद्धि और धार्मिक विचारों के मालिक थे। शस्त्र-विद्या में आप जी विशेष रुचि रखते थे। ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी ने अपने पावन मुख से बचन किया था कि "यह योद्धा मुगलों के सिर ऐसे फोड़ेगा जैसे प्याज मुक्का मार कर तोड़ा जाता है।"

शहीदी से पहले श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी, बाबा बुड्ढा जी आदि प्रमुख सिखों को बुला कर, आने वाले समय और बदलते राजसी हालात के बारे में अवगत करवा दिया था और साथ में सावधान कर दिया था कि शायद निकट भविष्य में मुगल हकूमत के साथ सीधी टक्कर भी हो जाए। गुरिआई मिलने के समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की आयु ११ वर्ष की थी। आपकी तीक्ष्ण बुद्धि और दूरदृष्टि ने अच्छी तरह से देख लिया था कि हकूमत की बदली हुई राजनीति केवल श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी तक ही सीमत नहीं रहेगी। गरीब-जनता को राजसी अन्याय की मार से बचाने और धर्म की रक्षा के लिए जनता में ऐसा वीर-रस भरने की जरूरत है जो न ही किसी से डरे और न ही किसी को डराये।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गुरु-घर के मसंदों को हिदायत की कि वे सिख संगतों में गुरमति का प्रचार करने के साथ-साथ बढ़िया शस्त्र और घोड़े इत्यादि लाने को भी कहें। गुरु साहिब ने ५२ शूरवीर अपने पास रखे जो सिखों को शस्त्र-विद्या सिखा सकें। जल्द ही सिख फौजों की गिनती में भरपूर बढ़ावा होने शुरू हो गया। सतिगुरु जी की अगुआई में सिख नजदीकी जंगलों में शिकार खेलने और शस्त्र-विद्या के अभ्यास करने के लिए जाने लगे। हकूमत के अत्याचारों का मुकाबला करने के लिए बहुत से मुसलमान भी गुरु जी की नई बन रही फौज में भर्ती होने लगे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने श्री हरिमंदर साहिब के सामने राजसी ठाठबाठ पैदा करने के लिए श्री अकाल तख्त साहिब बनवाया। यहां पर प्रतिदिन रागी-ढाढी गुरमति प्रचार के साथ-साथ, योद्धाओं की वारें गाया करते थे। मुगल हकूमत के सताए हुए, जुल्म और अत्याचार का शिकार हुए, हर जाति के लोग गुरु साहिब की शरण में धड़ाधड़ आने शुरू हो गए। यहां पर बैठ कर उनके मन को शांति मिलती और हृदय को ठंड पड़ती थी। इसके साथ जीवन में कुछ नया करने के लिए उत्साह (बल) भी पैदा होता था। जिन ढाढियों

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर-१४३५१८ (पंजाब)*

ने प्रथम रूप में वारें गायन करने का काम शुरू किया था, उनका नाम भाई नत्था-भाई अब्दुल्ला था।

जहांगीर की मृत्यु के पश्चात शाहजहां तख्त पर बैठा। सिख धर्म की बढ़ती हुई ताकत उसको कांटे की तरह चुभने लगी। कई प्रकार के बहाने बना कर मुगल सरकार ने गुरु साहिब के साथ चार युद्ध किए। प्रथम युद्ध लोहगढ़ की लड़ाई थी जिसमें भारी फौज के साथ चढ़ कर आया मुखलिस खां मारा गया। तुर्कों के हौंसले पस्त हो गए। वे गुरु जी के सिंघों से जान बचा कर लाहौर की ओर भाग गए। इसके बाद हुई तीन और जंगों में भी गुरु जी की ही जीत हुई। मुगल सेना के बड़े-बड़े सेनापति मारे गए। गुरु जी ने अलग-अलग स्थानों पर जाकर, अकाल पुरख का नाम लोगों को जपाया, उन्हें धर्म के रास्ते पर चलाया। गुरु जी ने मानवता की सेवा के लिए अनेक परोपकारी कार्य किये। जम्मू-कशमीर में जब गिल्टी बुखार (चेचक) से लोग मरने लगे तो गुरु जी ने तुरंत वहां पर पहुंच कर रोगी मानवता की बेमिसाल सेवा की। बटाले के पंडित नित्यानंद का भ्रम दूर किया। सभी को शुद्ध गुरबाणी पढ़ने, सुनने और विचार करने का उपदेश दिया। रिद्धि-सिद्धि (करामात) वाले मार्ग को "अवरा साद" कह कर नकार दिया। आप जी ने पूरी आयु संगत को अकाल पुरख के नाम-सिमरन और गुरबाणी के साथ जोड़ा। श्री गुरु नानक देव जी से आरंभ हुए गुरमति मार्ग का दूर-दूर तक प्रचार करके मानवता को वास्तविक जीवन की सूझ प्रदान की। आप जी के पांच सपुत्र थे—बाबा गुरदित्ता जी, बाबा सूरजमल जी, बाबा अणीराय जी, बाबा अटल राय जी और श्री गुरु तेग बहादर जी। आप जी की एक बेटी थी जिसका नाम बीबी वीरो जी था। अपने पौत्र श्री गुरु हरिराय साहिब में धुर-दरगाही रब्बी ज्योति टिका कर, गुरतागद्दी की दात बख्श कर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ६ चेत सं. १७०१ तदनुसार ३ मार्च, १६४४ ई को अकाल पुरख की ज्योति में विलीन हो गए।



कविता

श्री गुरु हरिक्रिशन जी

बाला प्रीतम को देख कर, जग हैरान हो जाये।
सत्य की ज्योति कुल दुनिया की, सच को राह दिखाये।
लोगों का कल्याण करने को, इस दुनिया में आये।
नूर नूरानी रूप अलाही, सब दुख-दर्द मिटाये।
छज्जू झीवर के मुंह से आप ने, गीता-अर्थ कराये।
लाल चंद को राह दिखा, अहंकार चूर कराये।
राजा जय सिंह की रानी के, मन में शंके आये।
दासियों में पहचान कर उसके, दिल के भ्रम उठाये।
जजिआ जुगत नामक बंदा, जब गुरु-घर में आया।
उस पर कृपा-दृष्टि डाली, तंबाकू छुड़वाया।
गैंदा मल नशों में लिपटा, जूयेबाजी में फंसा।
माथा टेक उपदेश सुना जब, इन लतों से छूटा।
धन्य श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी, जग के दुख मिटायें।
हम भी सच्चे मन से धिआएं और सच्चा सुख पायें।



-स. अवतार सिंघ, सस्ता वस्त्र भंडार, नाका-रामनगर रोड, फैजाबाद (यू. पी.)-२२४००१

बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी हमारे सातवें गुरु श्री गुरु हरिराय साहिब जी के छोटे साहिबजादे थे। आप जी का जन्म माता किशन कौर जी की कोख से ८ सावन सं. १७१३ तदनुसार ७ जुलाई, १६५६ ई की कीरतपुर साहिब में हुआ। प्रसिद्ध कवि गुलाब सिंघ आप जी के जन्म के बारे में अपने रचना ग्रंथ 'गुरू प्रणाली' में लिखते हैं :

जननी क्रिशन कौर गुर हरिराय घर,
तिनके उदर पुर कीरत मैं जानीऐ।

आप जी के पिता श्री गुरु हरिराय साहिब जी ने आप जी के जन्म के समय ही फरमाया था कि जो महान कार्य आप करेंगे और कोई नहीं कर सकेगा।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का चेहरा कोमल, मनमोहित करने वाला और लासानी था। उनके दर्शन करने वाला उनकी ओर खिंचा चला आता था और दर्शन करके निहाल हो जाता था। आपका तेज खुली आंखों से देखने वाले को चकाचौंध करता था।

एक प्रसिद्ध हिंदी कवि केशवदास, जो खुद श्री गुरु अरजन देव जी की शरण में आया था और बाद में उसके बेटे 'कुवदेश' ने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की शरण ली और दरबारी कवि बना, अपनी रचना में लिखता है कि श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की तरफ देखते ही सभी प्रकार की लालसाएं खत्म हो जाती हैं :

"गुरु अत्रिषन, गुरु हरिक्रिशन।"

संत नरैण सिंघ ने 'बदन' अथवा 'मदन' समभाव मन को खींचने वाला अथवा बसंत की तरह खिला हुआ कहा है। इसी तरह कवि सौंधा सिंघ ने "श्री गुरु हरिक्रिशन अठवें महल, हर सम सुंदर रूप ते रवि सम तेज अनूप" कह कर आपकी उपमा की है।

आप जी का पालन-पोषण आपके पिता श्री गुरु हरिराय साहिब जी की निगरानी में हुआ। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी अत्यंत धैर्यवान स्वभाव के मालिक थे। जब आप बचपन में बैठने के सक्षम हो गए तो आप 'चौंकड़ा' मार कर बैठते थे। आप बचपन में ही कीर्तन सुनने लग गये थे। आप बाल अवस्था में ही गुरबाणी का पाठ शुद्ध एवं लय में करते थे। आप इतने मीठे स्वर में पाठ करते थे कि पक्षी भी सुनकर अपनी परवाज रोक लेते थे। आप शरीर के अति सुंदर और स्वभाव के शील थे। आप बचपन में ऐसे खेल खेला करते थे जिनसे जोश, उत्साह, हिम्मत और दिलेरी की भावना पैदा होती थी।

गुरगद्दी-प्राप्ति

उधर दूसरी तरफ श्री गुरु हरिराय साहिब जी के बड़े बेटे रामराय ने समय की मुगल हकूमत और बादशाह औरंगजेब की खुशामद कर प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी की उच्चारण की हुई बाणी की पंक्ति *"मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर"* की जगह *"मिटी बेईमान की पेड़ै पई कुम्हिआर"* कह दिया

**S/o Ranjeet Singh, 2946/7, Bazar Loharan, Chowk Luxmansar, Sri Amritsar*

और धन-पदार्थों के लालच में आकर औरंगजेब को खुश करने के लिए कई योग्य-अयोग्य करामातें भी दिखाईं, जिनका गुरु-घर में कोई स्थान नहीं। इस पर पिता श्री गुरु हरिराय साहिब बेहद नाराज हुए और रामराय को गुरगद्दी के अयोग्य समझा और सिख संगत को उपदेश दिया कि रामराय से किसी प्रकार सम्बंध न रखना।

श्री गुरु हरिराय साहिब जी ने अपने छोटे बेटे श्री (गुरु) हरिक्रिशन साहिब के दिव्य गुणों, गुरु-परंपरा, प्यार, बाणी-अभ्यास, श्रद्धा, सत्कार व संगत के साथ प्यार वाले सच्चे रंग को देखते हुए यह ऐलान किया और वरदान भी दिया कि जो भी (गुरु) हरिक्रिशन साहिब के दर्शन करेगा उसके सभी दुख दूर तो होंगे ही साथ में उसके ऊपर गुरु-घर की खुशियां भी होंगी।

श्री गुरु हरिराय साहिब के इस ऐलान का इतना असर पड़ा कि रामराय के साथ सम्बंध रखना ऐसे समझा जाने लगा जैसे कोई बड़ा अपराध अथवा पाप हो। यही कारण था कि सन् १६६१ ई में श्री गुरु हरिराय साहिब जी ज्योति-जोत समाने से पूर्व समूची संगत के सामने उन्होंने बालक रूप (गुरु) हरिक्रिशन साहिब जी को अपनी ज्योति, युक्ति और समूची रास का गुरु वारिस स्थापित कर दिया। श्री गुरु हरिराय साहिब जी ने श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी को खुद गुरगद्दी पर बिठाया, फिर माथा टेका और सदैव सलामत रहने का बोल प्रगटाया। इस तरह पांच साल की आयु में ही श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी सक्षम और योग्य गुरु के रूप में प्रकट हुए।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का जीवन जहां बहुत विचित्र और विशेषता सहित साबित हुआ वहां उनका जीवन धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रों में भी बहुत सक्षम और प्रभावशाली सिद्ध हुआ। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब का संगत से और संगत का गुरु जी से अत्यंत प्रेम पड़ गया।

गुरु-दरबार की मर्यादा की समूची सेवा-संभाल चाहे सिख-संगत ही करती थी परन्तु सिख संगत की अगुआई के लिए श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब खुद निरंतर गुरु-दरबार में हाजिर रहते थे। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की विशिष्टता यह थी कि छोटी उम्र में गुरु-दात की बढ़ाई प्राप्त करने के बाद भी उनका अनुभव संपूर्ण रूप में जागरूक था। आपका हृदय बहुत कोमल, परोपकारी और ज्ञानमयी था। व्यवहार में इतनी विनम्रता, मिठास और न्याय था कि अहंकार, दुविधा, लालच, कप्ट और क्रोध जैसी भावनाएं उनके पास कभी नहीं आई थीं।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब अंतर-बोध के धारक और ब्रह्मज्ञानी थे। उधर दूसरी तरफ यह सब कुछ देखकर रामराय ने खुद को गुरगद्दी का असली वारिस होने का फैसला करवाने के लिए औरंगजेब को मजबूर किया। औरंगजेब ने राजा जय सिंह सवाई को कहा कि आप बालक-गुरु को यहां बुलवाओ। राजा जय सिंह ने अपना वजीर भेज कर गुरु जी को दिल्ली आने के लिए कहा।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब न्यौता मिलने के बाद कुछ मुख्य सिखों से मशवरा करने लगे और कीरतपुर से दिल्ली रवाना हो गए। कीरतपुर से दिल्ली जाते हुए गुरु जी अंबाला से आगे गांव पंजोखरा में दो-तीन दिन विश्राम के लिए ठहरे, जहां आपकी मुलाकात एक अहंकारी पंडित लालचंद के साथ हुई। पंडित ने गुरु जी से तर्क किया कि "अगर आप इतनी छोटी आयु

में गुरु-पद के सक्षम हो तो 'गीता' के अर्थ करके सुनाओ।" पंडित की यह बात सुन कर गुरु जी ने वहां के रहने वाले एक अनपढ़ छज्जू नामक व्यक्ति को अपनी कृपा-दृष्टि से ज्ञानवान बना कर उसके मुंह से गीता के अर्थ करवा कर पंडित की शंका को निवृत्त किया।

दिल्ली पहुंचना

गुरु जी के दिल्ली पहुंचते ही राजा जय सिंह ने बस्ती जय सिंह पुरे में गुरु जी का अपने बाग वाली कोठी, जो बंगला नाम से प्रसिद्ध थी, में निवास करवाया। गुरु जी ने इस बंगले में कुछ दिन आराम किया।

जिस समय गुरु जी दिल्ली पहुंचे थे उस समय शहर में चेचक की बीमारी फैली हुई थी। आप जी के पास बहुत सारे रोगी आए। जिस-जिस रोगी पर आपकी कृपा-दृष्टि होती वह तुरंत ठीक हो जाता। इस तरह आपकी परोपकारी उपमा सुन कर कई अन्य प्रकार के रोगों वाले लोग भी आने लगे। यह देखते हुए आप जी ने रोगियों की सेवा-संभाल हेतु लंगर लगवाए तथा पानी की सुविधा के लिए एक चुबच्चा बनवाया। दुखों के संहारक तथा निवारणकर्त्ता के रूप में प्रसिद्ध गुरु जी को तभी तो आज 'अरदास' में इस भाव में याद किया जाता है :

श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ ॥

उधर दिल्ली निवास करने के बाद औरंगजेब ने यह संदेश भेजा कि मैं आपके दर्शन करना चाहता हूं। गुरु जी अच्छी तरह जानते थे कि रामराय ने औरंगजेब को अपने प्रभाव में ले रखा है। गुरु जी ने बादशाह को संदेश भिजवाकर पूरे तर्क के साथ यह बता दिया कि गुरु नानक साहिब से अब तक गुरगद्दी की जिम्मेवारी आयु या छोटे-बड़े को देख कर नहीं मिली बल्कि इसके लिए एक विशेष प्रकार की कसौटी पर खरा उतरना पड़ता है। इन बातों से औरंगजेब को कोई आशंका न रही। अगर कोई अशंका रह भी गई तो वह राजा जय सिंह की पटरानी की दासियों में से पहचान करने पर दूर हो गई।

दिल्ली निवास के समय चेचक रोगियों की सेवा करते हुए आप जी को भी चेचक निकल आई। इस छूत की बीमारी की वजह से आप ने शहर से बाहर यमुना के किनारे पर निवास कर लिया। आपकी हालत बहुत नाजुक हो चुकी थी, जिसके कारण संगत काफी भयभीत थी। गुरु जी ने संगत को धैर्य बंधाया। गुरु जी का अंतिम समय नजदीक समझ कर सिख सेवादारों ने विनती की कि "हे सच्चे पातशाह! जिसको आप गुरगद्दी के योग्य समझते हो संगत को उसके चरणों के साथ जोड़ जाओ।" सिखों की यह विनती सुन कर गुरु जी ने उच्चारण किया "बाबा बकाले", इसका भाव यह था कि बकाले नामक गांव में रहने वाला 'बाबा' आज से संगत का 'गुरु' है। यहां यह बात विचारयोग्य है कि उस समय श्री (गुरु) तेग बहादर जी अपनी माता नानकी जी तथा महल माता गुजरी जी सहित २० साल से बकाले गांव में रह रहे थे। श्री गुरु तेग बहादर जी श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी के 'बाबा' (दादा) लगते थे। उस समय बड़ों का नाम लेना उनका निरादर समझा जाता था, इसलिये गुरु जी ने नाम नहीं लिया और 'बाबा' कह दिया, जो बकाले गांव में रहते थे।

कोई आठ दिन बीमारी के हमले के चलते आप ३ वैशाख सं. १७२१ तदनुसार ३० मार्च, सन् १६६४ को ज्योति-जोत समा गए।

(शेष पृष्ठ ४१ पर)

श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ

*-डॉ. अमृत कौर**

कीर्तन हो रहा है, संगत जुड़ी है। बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी अपनी संगीतमयी मधुर आवाज में दैवी कीर्तन द्वारा संगतों को आनंदित कर रहे हैं। उनकी अन्तरात्मा से फूटता दैवी संगीत और अधरों पर खेलती चिरपरिचित मुस्कान अशांत हृदयों को शान्ति प्रदान करती है, नेकी की प्रेरणा देती है। कीर्तन के रस में निमग्न संगत को लगता है मानो अमृत की वर्षा हो रही हो। उनका तन-मन कीर्तन के आनंद में निमग्न है :

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥
कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ (पन्ना २६२)

यह कीर्तन जिला अंबाला के पंजोखरा गांव में हो रहा है। संगत में पंडित लाल चंद भी बैठा है, जिसने गुरु जी से पूछा था कि "आपको गीता का ज्ञान है? यदि है तो मेरे साथ शास्त्रार्थ कीजिए।" गुरु जी मुस्करा दिए थे और फिर उन्होंने कहा था कि "पंडित जी! आप किसी को भी ले आएं, वह आपको गीता-ज्ञान देकर आपकी तसल्ली करा देगा।"

पंडित लाल चंद परीक्षा हेतु एक अनपढ़ एवं महामूर्ख दिखाई देने वाले छज्जू नामक व्यक्ति को ले आया। उसने अब उससे पूछा, "बताओ गीता की शिक्षा का क्या सारांश है? सतिगुरु हरिक्रिशन साहिब जी की कृपा-दृष्टि से छज्जू ने विस्तृत रूप में गीता का तत्व-सार बताया।

गीता-दर्शन की सुंदर व्याख्या सुन कर लाल चंद दंग रह गया। उसके मुख से स्वयंमेव निकला—"धन्य श्री गुरु हरिक्रिशन जी महाराज!" छज्जू के सही उत्तर देने पर अब भी एक शंका उसके मन में बार-बार उठ रही थी। एक अनपढ़, व्यक्ति गीता के तत्त्वों की इतनी सुंदर व्याख्या करने के योग्य कैसे बन सकता है?

इस घटना का सांकेतिक अर्थ बहुत गहरा है। अनपढ़ व्यक्ति से गीता का अर्थ करवाकर गुरु जी ने अहंकारी पंडितों एवं विद्वानों के अहं और अभिमान का नाश किया और स्पष्ट किया कि शिक्षा केवल पंडितों एवं विद्वानों की बपौती नहीं है। जन-साधारण अथवा जनता भी धार्मिक ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त कर सकती है यदि यह शिक्षा उन्हें अपनी मातृभाषा में सरल रूप से प्रदान की जाए। छज्जू की हीन भावना दूर हुई, मानसिक उत्थान हुआ। उसमें विद्या प्राप्त करने की भावना उत्पन्न हुई। गुरु-कृपा से बाद में वे ऐसे विद्वान हुए कि *"गद पद सभि छन्द उच्चारे। निगमागम गीता आदिम सारे।"*

गुरु जी ने बाद में उसे धर्म प्रचार के लिए जगन्नाथपुरी भेजा। इसी छज्जू के वंश में भाई हिम्मत सिंघ का जन्म हुआ जो पांच प्यारों में से एक था।

औरंगजेब गुरु जी की बाल्यावस्था देखकर उन्हें भी रामराय की भांति अपने प्रभाव के नीचे लाना चाहता था, ताकि सिखी का प्रचार रोका जा सके। उसने गुरु जी को दिल्ली आने का निमन्त्रण दिया, परन्तु गुरु जी ने उसके निमन्त्रण को ठुकरा दिया, क्योंकि गुरु जी को अपने पिता श्री गुरु हरिराय साहिब जी का

**१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०३*

आदेश था कि औरंगजेब जैसे निर्दयी व अत्याचारी शासक को मुंह मत लगाना। उसने राजा जय सिंह के साथ साठ-गांठ करके दिल्ली की सिख संगत द्वारा दिल्ली आने के निमन्त्रण को गुरु जी द्वारा स्वीकार करवा लिया। गुरु जी दिल्ली के लिए चल पड़े। दिल्ली जाते समय कुरुक्षेत्र, थानेसर, पानीपत आदि नगरों में रुके। अम्बाला पहुंचते-पहुंचते ५०,००० के करीब संगत उनके साथ हो ली जिन्हें वापिस भेजा गया। गुरु जी के मुख से कीर्तन-कथा सुनकर संगत निहाल हो जाती। कुरुक्षेत्र पड़ाव किया तो संगत को उपदेश देते हुए कहा कि दुखी-जनों की सेवा करना सर्वोत्तम है तथा मनुष्य-मात्र की सेवा ही प्रभु की वास्तविक पूजा है।

दिल्ली पहुंचने पर राजा जय सिंह ने गुरु जी की बड़ी आवभगत की और उन्हें अपने विशेष बंगले में ठहराया जहां अब गुरुद्वारा बंगला साहिब है। गुरु जी के ज्योति जोत समाने पर राजा ने उनकी याद में गुरुद्वारा निर्मित कर समर्पित कर दिया। गुरु जी के आने पर दिल्ली में भी कथा-कीर्तन और प्रवचनों की श्रृंखला शुरू हो गई। राजा जय सिंह की महारानी की बड़ी तीव्र इच्छा थी कि गुरु जी उनके महलों में आएं और उन्हें मां कह कर बुलाएं, परन्तु वह गुरु जी की परीक्षा भी लेना चाहती थी कि यदि गुरु जी वास्तव में आत्मिक शक्ति के धारक हैं तो मेरे मन की बात जानकर मेरी मनोकामना पूर्ण करें। महारानी नौकरानी की वेशभूषा धारण कर अन्य सुसज्जित रानियों के बीच में बैठ गई। राजा ने गुरु जी से कहा, "गुरु जी कृपा करके पहचानो कि इन स्त्रियों में महारानी कौन-सी है?" गुरु जी मुस्करा पड़े और गोली के रूप में बैठी महारानी की गोद में जाकर बैठ गए—"महारानी मां जी, नमस्कार!" महारानी की आंखों में प्रसन्नता के आंसू बह निकले और उनके आश्चर्य की सीमा न रही।

युगों-युगांतरों से प्यासी उनकी अन्तरात्मा उस दैवी प्रेम की अनुभूति प्राप्त कर शांत हो गई और वे गुरु जी के श्रद्धालु बन गए। गुरु जी के दिल्ली पहुंचने पर औरंगजेब ने गुरु जी से मिलने का प्रयास किया, मगर गुरु जी ने साफ इंकार कर दिया, क्योंकि उन्हें अपने पिता जी का आदेश था कि किसी राजा-बादशाह के पास मत जाना। एक महान बादशाह को मिलने से इंकार करना उनकी नैतिक निर्भयता, निडरता और बहादुरी का सूचक है। बाला-प्रीतम होते हुए भी अपने उदारहण से भयमुक्त वातावरण का सृजन किया और संगत को स्पष्ट आदेश दिया कि ये भूपति चार दिन के मेहमान हैं, परन्तु औरंगजेब ने फिर भी मिलने का प्रयास नहीं छोड़ा। उसने अपने बड़े बेटे शहजादा मुअज्जम (बहादुरशाह) को गुरु जी से मिलने के लिए भेजा। शहजादा उनके दर्शनों से अत्यधिक प्रभावित हुआ और बताया कि "उनके मुख पर दैवी नूर है। वे तो पैगम्बर मालूम होते हैं। मेरा तो उनसे बिछुड़ने का मन नहीं करता था।" इन शब्दों से प्रभावित हो औरंगजेब ने पुन: गुरु जी से मिलने का प्रयास किया। गुरु जी ने उसे दर्शन देने से इंकार कर दिया। यह है आत्मिक शक्ति की गूंजती आवाज जिसे देखकर भाई गुरदास सिंघ उन्हें 'अष्ठम बलबीरा' कहते हैं। उन्होंने मुगल साम्राज्य के सम्मुख न झुककर सिखी की शान को बरकरार रखा।

उन दिनों दिल्ली के लोग चेचक के प्रकोप में आ गये। हजारों मनुष्यों को उसने अपनी चपेट में ले लिया। रोगियों के दुख दूर करने के लिए गुरु जी ने अनथक प्रयास किए तथा अपने विशेष दवाखाने की दवाएं रोगियों को दीं। लंगर व्यवस्था को और सुदृढ़ किया। स्वच्छ

जल के पानी का चुबच्चा बनवाया। गुरु जी जप और अरदास द्वारा रोगियों का दुख दूर करने के लिए अरदास करते। उनकी मुस्कराती दृष्टि और स्नेहिल स्पर्श रोगियों का आधा दुख दूर कर देता।

चेचक की इस बीमारी ने महामारी का रूप धारण कर लिया। चारों ओर हाहाकार मच गया। महादानी गुरु जी ने अपने दसवंध के खजाने खोल दिए। सिर हथेली पर रखकर बीमारों की सेवा की। अंत में सेवा करते-करते चेचक का प्रहार हो जाने पर आपने महसूस किया कि उनके ज्योति जोत समाने का समय आ गया है। सारी संगत को सांत्वना प्रदान करते हुए कहा कि मेरे पीछे विलाप नहीं करना। शबद-गायन और कीर्तन द्वारा प्रभु का भाणा मानना है। गुरु-मर्यादा के अनुसार उन्होंने नारियल और पांच पैसे मंगवाए, मस्तक निवाया और संगत को आदेश दिया—"बाबा बकाले।" अर्थात् मेरे बाद गुरगद्दी का उत्तरदायित्व निभाने वाले महापुरख बकाले नामक ग्राम में हैं और वे हमारे बाबा (दादा) जी हैं। अल्पायु के बावजूद अपने बाबा श्री गुरु तेग बहादर जी का गुरगद्दी के लिए चुनाव उनकी निर्णयात्मक शक्ति, विवेक बुद्धि और विलक्षण योग्यता का परिचायक है।

गुरु जी ने सामाजिक और नैतिक निर्माण के लिए भी अहम् कदम उठाए। आधुनिक युग की तरह उस युग में भी कन्याएं मारने का रिवाज था। उन्होंने हुक्मनामे भेजे—"कुड़ीमार संगत में नहीं बैठ सकता।" कुड़ीमारों से गुरु जी विशेष रूप से नफरत करते थे और रोपड़ के शाहूकार राजाराम का संगत ने बहिष्कार कर दिया। संगत को उसके साथ रोटी-बेटी की सांझ रखने की मनाही कर दी, क्योंकि वह जन्मते ही अपनी बेटियों को मार देता था। उसकी भेंट ठुकरा दी। सिख रहित मर्यादा में कुड़ीमार के त्याग के लिए भी कठोर आदेश दिए गए हैं। केश न काटने पर बल दिया, क्योंकि केश आत्मिक शक्ति के विकास का अटूट साधन हैं। अपनी प्रचार यात्राओं में लोगों को जुआ, तम्बाकू और शराब को त्यागने के लिए प्रेरित किया। भाई भोला, फकीरिआ, भीमा, संगता, ये चारों खड़ताल बजाकर, घुंघरू बांध कर, नाच-गाकर अनाज मांगा करते थे। गुरु जी ने उन्हें *"घालि खाइ किछु हथहु देइ"* द्वारा परिश्रम के द्वारा जीविकार्जन का उपदेश दिया। गुरु की गोलक को अपनी सुख-सुविधा के लिए प्रयोग न करने का आदेश दिया और इसे विष की भांति मानने का आदेश दिया। संगत और पंगत द्वारा मानवतावाद, प्यार, एकता, भाईचारे की शिक्षा प्रदान की। नाम-सिमरन द्वारा सदैव प्रसन्नचित्त रहने, चढ़दी कला में रहने, सरबत्त की भलाई के लिए प्राण उत्सर्ग कर देने की शिक्षा अपने सबल व्यक्तित्व द्वारा प्रदान की।

सचमुच महापुरुषों को आयु के बंधनों में नहीं बांधा जा सकता। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी पांच वर्ष की अल्पायु में गुरगद्दी पर बैठे और सात वर्ष आठ महीने की आयु में वे परलोक गमन कर गए। कवि संतोख सिंघ के शब्दों में हम उनको इन पंक्तियों द्वारा श्रद्धांजलि दे सकते हैं :

बाल वैस ब्रिध गिआन महि समरथ स्री गुरदेव।
पद अरबिंदन बंदना मुकति पाई जिन सेव।

सन्दर्भ सूची :

१. परचीआं भाई सेवा दास, भाषा विभाग, पृ. ८०
२. वृत्तांत गुरु हरिक्रिशन साहिब जी, आठवां चरण, बंसावलीनामा, कृत भाई केसर सिंघ छिब्बर।
३. मैकालिफ, सिख धर्म, जिल्द चौथी, पृ. २३८



श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी

-डॉ. मनमोहन सिंघ*

श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ।

उपरोक्त शबद जो कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा रचे गए हैं, से सिख धर्म के आठवें गुरु जी की महानता का पता चलता है। आपकी उपमा करते हुए भाई संतोख सिंघ इस तरह बखान करते हैं :

बाल अवसथा गिआन घन, नाशक बिघन बिसाल।
चरन सरेजनि को नमो, श्री हरिक्रिशन क्रिपाल ॥११॥ (पोथी नौवीं)

वे बचपन से ही प्रतापी, शांतचित्त तथा संत रूपी स्वभाव वाले थे। वे गुरबाणी के उपासक थे। "होनहार बिरवान के होत चिकने पात" के अनुसार उनके बहुमुखी होने का प्रगटावा उनके जन्म से ही हो गया था। अंग्रेजी का एक महान कथन है **"Man is known by deeds and not by he years the lived."** इस कहावत के अनुसार श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी अभी मुश्किल से पांच वर्ष के ही हुए होंगे कि श्री गुरु हरिराय साहिब जी ने इनकी रूहानी शख्सियत को देखते हुए गुरगद्दी सौंप दी और कहा कि अब आप ने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाये गये धर्म को आगे रास्ता दिखाना है। चल रही रीति के अनुसार भाई भाना जी के कर-कमलों द्वारा गुरगद्दी का कार्यभार रस्मी तौर पर सौंपा गया, परन्तु इस पर रामराय व इसके साथियों ने बहुत ही विरोध किया। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी ने बिना किसी परवाह के सिख संगतों का नेतृत्व किया तथा पहले सातों गुरु साहिबान की चलाई प्रथा के अनुसार सिख धर्म का प्रचार-प्रसार किया।

बहुत से लोग इस आशंका में थे कि इस छोटी उम्र के बालक को गुरगद्दी देनी उचित नहीं, क्योंकि उनका ख्याल था कि उनमें अलाही ज्योति प्रकट नहीं हो सकती। यह आशंका मात्र ही थी, क्योंकि जो घटनायें गुरु साहिब के समय घटीं उनसे साफ स्पष्ट था कि वे एक महान रूहानी शख्सियत के मालिक थे।

रामराय जो गुरु-घर का विरोधी था, उसने औरंगजेब के पास जाकर शिकायत की कि गुरगद्दी का हकदार वह है तथा बालक हरिक्रिशन जी का गद्दी पर हक नहीं हो सकता। शिकायत सुनकर जालिम औरंगजेब ने गुरु साहिब को दिल्ली बुलवाया, परन्तु गुरु साहिब ने जाने से इंकार कर दिया। कुछ समय के बाद राजा जय सिंह ने दिल्ली के सिखों को प्रार्थना की तो श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी दिल्ली गये। जिस समय गुरु जी दिल्ली गये तो उनका बहुत सत्कार किया गया तथा जिस जगह गुरु जी ठहरे उस जगह आज गुरुद्वारा बंगला साहिब सुशोभित है।

गुरु जी जब कीरतपुर से दिल्ली गये तो रास्ते में उनका मिलाप कई लोगों के साथ हुआ। कई लोगों ने गुरु साहिब की खूबी को पहचानने के लिए कई प्रकार के सवाल आदि किये, परन्तु गुरु जी ने सबका जवाब बड़ी सकुशलता से दिया।

कुरुक्षेत्र के नजदीक एक घमंडी लालचंद पंडित ने भी गुरु जी की विद्वता को ललकारने

*८८९, फेज १०, मोहाली-१६००६२

की कोशिश की और अपनी विद्वता का अहंकार दर्शाया। लाल चंद की आशंका दूर करने के लिए गुरु साहिब ने कहा कि इस गांव से जिसको चाहे ले आओ वही आपके प्रश्नों का उत्तर दे देगा। एक छज्जू नाम का अनपढ़ व्यक्ति लाया गया। गुरु जी ने छड़ी छज्जू के सिर पर रखी, तब उसने पंडित लाल चंद के सवालों के ऐसे जवाब दिये कि वह आश्चर्यचकित होकर रह गया। अंत लाल चंद गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा।

राजा जय सिंह के यहां जब गुरु जी ठहरे हुए थे तो राजा जय सिंह की पटरानी को भी उनकी रूहानियत पर आशंका हुई और दर्शनों के साथ-साथ इम्तिहान भी लेना चाहा। पटरानी ने खुद दासी वाले कपड़े पहन लिये तथा एक दासी को रानियों वाले सुंदर कपड़े पहना दिये ताकि गुरु जी को धोखे में डाला जा सके। जब वे इकट्ठी होकर गुरु साहिब के पास आईं तो अंतरयामी सतिगुरु जी ने एकदम पटरानी को दासी के रूप में पहचान लिया। इस प्रकार गुरु जी के गुणों की चर्चा चारों तरफ फैल गयी।

एक बार एक कुष्ठ रोगी जो बहुत दुखी था, गुरु साहिब जी को अपनी स्थिति से परिचित करवाने लगा। तब गुरु जी ने अपने हाथों में पकड़ा हुआ रुमाल उसे देकर कहा कि इसे अपने शरीर के ऊपर फेरना और परमात्मा का नाम जपना। उसकी कृपा से तेरे दुख दूर हो जायेंगे। उस दुखी ने गुरु जी के उपदेश के अनुसार ही अमल किया और उसका रोग दूर हो गया।

दिल्ली में उस समय चेचक व हैजे का रोग व्यापक रूप से फैला हुआ था तथा बहुत-से लोग इस बीमारी के कारण मर रहे थे। लोगों ने गुरु जी के सामने प्रार्थना की। इस पर गुरु जी ने अपने कमरे के बाहर एक पानी का चुबच्चा बनवाकर उसमें जल भरवाया। जो भी रोगी उससे जल ले जाता था वही ठीक हो जाता था। आजकल भी श्रद्धा वाले लोग गुरुद्वारा बंगला साहिब आकर इस चुबच्चे से जल ले जाते हैं और दुखों से छुटकारा पा जाते हैं।

गुरु साहिब जी की महानता सुनकर औरंगजेब का दिल भी गुरु जी को मिलने के लिए किया, परन्तु गुरु जी ने मिलने से इंकार कर दिया। फिर बादशाह ने अपना राजकुमार गुरु जी के पास भेजा। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी ने राजकुमार को ऐसे रूहानी उपदेश दिये कि उसकी आत्मा संतुष्ट हो गयी। राजकुमार ने सारी बातचीत बादशाह को बताई। यह जानकर बादशाह भी बहुत हैरान हुआ कि इस छोटी-सी उम्र में इस बालक के पास इतनी रूहानी शक्ति है!

गुरु साहिब जी का दुख-भंजन प्रभाव इस प्रकार बढ़ा कि दिल्ली के लोग तथा कई और जगहों के लोग भारी गिनती में उनके चरणों को स्पर्श करने के लिए आने लगे। मुसलमान उन्हें बाला-पीर तथा हिन्दू बाला-गुरु कहने लगे।

गुरु जी दुखियों के दुख-निवारक बन गए। ऐसे में गुरु जी पर भी चेचक ने हमला कर दिया। इस पर गुरु जी ने संगत को शहर से बाहर डेरा लगाने के लिए कहा। यमुना के किनारे गुरु जी ने डेरा लगाया। वहां पर संगत ने गुरु जी से प्रार्थना की कि "आपके बाद संगत किसके दामन लगेगी?" गुरु जी ने कहा, 'बाबा बकाले'। इसके बाद वे ज्योति जोत समा गये। गुरु जी के बारे में भाई नंद लाल जी इस प्रकार लिखते हैं :

गुरू हरि किशन आं हमा फजलो जूद।
हक्कश अज हमा खासगां-ब-सतूद ।९३।

अर्थात् श्री गुरु हरिक्रिशन जी मेहर और बख्शिश का रूप हैं, रब्ब के अपने सभी विशेष कारीबियों में से सर्वाधिक स्तुति प्राप्त हैं।

भाई मनी सिंघ जी शहीद

-स. जसपाल सिंघ*

सिख इतिहास बहादुर शूरवीर योद्धाओं की अनगिनत कुर्बानियों से भरा पड़ा है। इस आलेख में मैं एक ऐसे महान शूरवीर बहादुर की गाथा बयान करने जा रहा हूं जिसने अपना समस्त जीवन ही सिखी के लिए जीया। इस महान योद्धा, ज्ञानी, तपी, हठी का नाम सिख इतिहास के पृष्ठों में सुनहरी अक्षरों में अंकित है। ये हैं भाई मनी सिंघ जी शहीद जिनके बारे में 'प्राचीन पंथ प्रकाश' के कर्त्ता भाई रतन सिंघ भंगू ने कुछ इस प्रकार लिखा है :

मनी सिंघ थो संत सुजान,
जती सती और धयानी मान।
हठी तपी औ मत को पूरो,
सहन शील औ दिल को सूरो।
करमी धरमी भगति गिआनी,
सतिगुर बचनन पर मति ठानी।

अर्थात् कवि ने आप जी को संत का सम्मान दिया है और जती, सती, हठी, तपी आदि गुणों, विशेषणों सहित चित्रित किया है।

ऐसे महान शूरवीर का जन्म १६६८ ई को गांव कैबोवाल (पटियाला) में हुआ। आप जी अपने बाल्यकाल में माता-पिता सहित श्री अनंदपुर साहिब श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी के दर्शन करने गये। आप जी का बचपन का नाम मनिया था। जब माता-पिता कुछ दिन रह कर श्री अनंदपुर साहिब से वापस जाने लगे तो बालक मनिया को श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी ने अपने पास ही रख लिया। इस समय आपकी आयु ५ वर्ष के लगभग थी। आप जी बाल गोबिंद राय जी के साथ खेला करते थे और सदैव ही गुरु साहिब के पास रहते। इस प्रकार बालक मनिया गुरु परिवार के सदस्य ही बन गए।

नौवें पातशाह की शहीदी के बाद जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी गुरगद्दी पर बैठे तो आप जी की ड्यूटी लंगर के प्रबंध के लिए लगाई गई, जो आपने पूर्णत: तन-मन से निभाई।

जब दशम पातशाह जी ने खालसा पंथ की साजना की तो आप जी अमृत छक कर भाई मनिया की बजाय भाई मनी सिंघ के नाम से पुकारे जाने लगे।

भाई मनी सिंघ एक बहुत अच्छे कवि भी थे। दशमेश पिता के परिवार में उच्च कोटि के कई कविजन उपस्थित थे, जिनमें भाई मनी सिंघ जी का नाम प्रथम कतार में आता था, जिसका प्रसंग भाई सेवा सिंघ जी कृत 'भट्ट वहियों' की लिखत में से भी मिलता है:

कवि बवंजा थे गुर पास।
उन में गणना इनकी खास।

भाई साहिब की रुचि अधिकतर गुरबाणी पढ़ने, पुरातन साहित्य अध्ययन की ओर होने के कारण दशमेश पिता जी ने आपकी ड्यूटी लंगर से बदल कर सिखों को गुरबाणी सिखाने के लिए लगा दी। आप जी से अनगिनत सिखों ने गुरबाणी सीखी थी। इसके अतिरिक्त भाई साहिब जी ने भंगाणी के युद्ध में भी अधिकाधिक योगदान डाला था। आप शस्त्र-विद्या में पूर्णत: निपुण थे।

१७०४ ई में मुगलों के साथ युद्ध के समय जब विकट परिस्थितियों में अनंदपुर साहिब का किला खाली करना पड़ा तो भाई साहिब जी की ड्यूटी गुरु जी के महिलों को सुरक्षित जगह पहुंचाने की लगाई गई, जो आप जी ने बहुत कुशलता से पूरी की। मुगलों के खतरों से बचते

*गांव-डाक, ढड्ढे, जिला अमृतसर। मो ९८५५५-२२५२६

हुए आप जी गुरु जी के महिलों को लेकर दिल्ली पहुंच गए।

मुगल सेनाओं के साथ जब दशम पातशाह जी की जंग समाप्त हुई तो जब आपको गुरु जी के मालवे की धरती तलवंडी साबो पर पहुंचने का समाचार मिला तो आप दिल्ली से गुरु जी के महिलों को साथ लेकर गुरु जी के दरबार में आकर उपस्थित हुए। यहां ही दशम पातशाह ने आप जी से श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बीड़ लिखवाई जो सिख पंथ में 'दमदमे वाली बीड़' के नाम से जानी जाती है।

भाई साहिब जी दशमेश पिता जी के साथ दक्षिण तक गये। कुछ समय पश्चात गुरु जी ने भाई मनी सिंघ जी को माता सुंदरी जी के पास भेज दिया। दशमेश गुरु जी के ज्योति जोत समाने के बाद माता सुंदरी जी ने आप जी को श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर का ग्रंथी नियुक्त करके भेजा। यहां आप जी ने तत्त खालसा और बंदई खालसा में हुई कलह को बहुत अच्छे ढंग से सुलझाया। समस्त पंथ आप जी का सत्कार करता था।

भाई मनी सिंघ जी ने श्री हरिमंदर साहिब का प्रबंध बहुत ही बढ़िया ढंग से चलाया। संगतों की रौणकें बहुत बढ़ गईं। भाई साहिब जी ने गुरबाणी की कथा का प्रवाह चलाया। यदि कोई चढ़ाई कर भी आये तो उसको अपने मिठास भरे शब्दों के द्वारा ऐसा मोम करते कि वह गुरु-घर का श्रद्धालु बन जाता, जिसका जिक्र 'पंथ प्रकाश' के कर्त्ता ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी इस तरह करते हैं :

जब जब कोई तुरक बिअदबी करन सुधासर आए।
बात ताहि फकीरन वारी ऐसी भांत सुनावै।
मोमन मोम होइ ढल जावे लख फकीर तिह सारा।
पास फकीर टिकाइ रखे बहु लंगर देह अपारा।

इस तरह भाई मनी सिंघ जी ने श्री अमृतसर रहते हुए गुरबाणी के अर्थ संगतों को समझाये और 'भगत रतनावली', 'गिआन रतनावली' आदि रचनाओं की रचना की। इसके अतिरिक्त आपने 'दसम ग्रंथ' को संपादित करने का कार्य आरंभ किया।

इस समय के दौरान आप जी ने सभी सिखों के साथ परामर्श किया कि दीवाली का मेला श्री अमृतसर में मनाया जाए जो मुगलों की सख्ती के कारण काफी देर से नहीं मनाया गया था। अतः भाई साहिब ने लाहौर के गवर्नर जकरिया खान को ५००० रुपये शुल्क देना करके मेला लगाने की मंजूरी लेकर सभी सिखों को श्री अमृतसर पहुंचने के लिए पत्र भेज दिये। उधर सूबे की नीयत बदल गई कि इसी बहाने सभी प्रसिद्धि प्राप्त सिंघ काबू आ जाएंगे। इस उद्देश्य के लिए शहर के नजदीक सेना जमा कर दी गई। इधर भाई मनी सिंघ जी मुगलों की इस बुरी नीयत को भांप गए और पुनः सिंघों को संदेश भेजे कि कोई मेले में श्री अमृतसर न आये।

मेले में संगत बहुत कम आई तो चढ़ावा (धन रूप भेटा) कम हुआ। मुगलों ने जब फिर भी अपना तय किया ५००० रुपया मांगा तो भाई साहिब ने कहा कि तुमने सेना भेजकर मेला तो लगने नहीं दिया तो फिर मामला क्यों मांगते हो? अतः इस झूठे जुर्म में भाई साहिब जी को गिरफ्तार करके लाहौर सूबे के पास पहुंचाया गया जहां आप जी को १७३८ ई को बंद-बंद काट कर शहीद करने का फरमान जारी कर दिया गया। भाई साहिब जी ने बाणी पढ़ते हुए पूर्णतः चढ़दी कला में रहकर अपना बंद-बंद कटा कर शहीदी प्राप्त की। इस शहीदी का बहुत ज्यादा और व्यापक प्रभाव पड़ा। इससे सिखों में बहुत गुस्सा पैदा हो गया, जिससे सिंघों ने मुगलों को बहुत क्षति पहुंचाई।

यह है महान शहीद की महान गाथा। वह शहीद जिसने अपना समस्त जीवन कौम के लेखे लगाकर सिख धर्म के चढ़दी कला वाले सिद्धांत को और भी अधिक बलवान किया। महान शहीद को स्मरण करते हुए हरेक प्राणी का मस्तक इस महान कुर्बानी के सामने स्वतः झुक जाता है।



भाई तारू सिंघ जी की शहीदी

हरेक इंसान यह चाहता है कि जिस मार्ग पर वह चल रहा है शेष लोग भी उसी मार्ग को अपनायें। इसी प्रकार हरेक मजहब के मानने वालों की बात है। हर कोई चाहता है कि जिस मजहब का अनुयाई मैं हूं, शेष लोकाई भी उसी मजहब में शामिल हो जाए। इसी तरह सिख धर्म के अनुयाई भी चाहते हैं कि हर कोई सिखी अपना ले, परंतु हमारा सिखी ग्रहण कराने का ढंग शेष कौमों से अलग है। सिखी के अनुसार लोगों का बल प्रयोग से मजहब परिवर्तित कराना निषेध है। इसके प्रतिरूप मुसलमानों में ऐसा नहीं है। उनमें हरेक उचित-अनुचित ढंग प्रयोग करके मुसलमान बनाना उचित है।

जब मुसलमानी ताकत हिंदोस्तान में आई, सारे हिंदोस्तान को मुसलमान बनाने के उद्देश्य की पूर्ति हेतु हकूमत ने सभी साधन प्रयोग किये। उन्होंने दूसरे धर्म वालों पर ऐसे जुल्म किए कि शैतान भी कांप उठा। इस मजहबी जुनून तथा जुल्म की आंधी को रोकने के लिए पंचम पातशाह गर्म लोह पर बैठे, नवम गुरु ने जालिम के द्वार पर जाकर शहादत दी और दशमेश पिता ने समस्त वंश ही कुर्बान कर दिया। १७४६ ई. में बाबा बंदा सिंघ बहादर की दर्दनाक शहादत के पश्चात इस जुल्म के झांझे ने ऐसा रूप धारण कर लिया कि इंसानी इतिहास में उसका उदाहरण कहीं भी नहीं मिलता। भाई तारू सिंघ जी भी मुसलमानों की, बल प्रयोग से धर्म परिवर्तत करने की नीति का शिकार हो गए।

भाई तारू सिंघ जी की शहीदी के समय लाहौर का गवर्नर जकरिया खान था। तब नादर शाह हिंदुओं-मुसलमानों पर अत्याचार करने के बाद वापस जा चुका था। सिंघों ने उसे करारे हाथ दिखाये थे। सिंघों की बहादुरी से प्रभावित होकर उसने यह भविष्य कथन जकरिया खान को कर सुनाया था कि ये लंबे केशों तथा दाड़ियों वाले शीघ्र ही इस मुल्क के हाकिम बन जाएंगे।

जकरिया खान ने मजहबी कानून अधीन सिखों पर जुल्म करने में कोई फर्क न रहने दिया। सिखों के सिरों के मूल्य रख दिये और गश्ती सेनाएं सिखों के शिकार हेतु छोड़ दीं। सिंघ घर-घाट छोड़कर जंगलों, पहाड़ों और रेतीले मरुस्थलों को निकल पड़े। कहीं-कहीं कोई-कोई सिंघ ही गांवों या शहरों में रह गया।

ऐसा एक सिंघ था भाई तारू सिंघ, जो श्री अमृतसर परगने के गांव पूहले का रहने वाला था। छोटी आयु में ही भाई जी के सिर से पिता का साया उठ गया। गुरसिख माता ने अपने बच्चे की रग-रग में गुरबाणी, गुर-इतिहास और गुरसिखी के लिए प्यार भर दिया।

भाई तारू सिंघ जी कुछ जवान हुए तो कृषि का व्यवसाय करने लग गए तथा उस विपदा के समय वे आये-गये सिंघ की लंगर आदि की सेवा के लिए हर समय तैयार रहते थे। सिंघ उनके घर कई-कई दिन रह जाते थे। सद्व्यवहार वाले और धार्मिक जीवन के कारण उनके गांव के तथा इर्द-गिर्द के गांवों के हिंदू-मुसलमान भी उन पर बलिहार जाते थे और उनकी प्रशंसा करते न थकते थे। यही कारण था कि भाई जी अचिंत होकर अपने गांव में उस समय भी रह रहे थे जब सिखों पर महान भीड़ बनी हुई थी।

स. रतन सिंघ भंगू 'प्राचीन पंथ प्रकाश' में लिखते हैं कि एक दिन नवाब जकरिया खान ने अपने अहलकारों तथा मुखबिरों से पूछताछ की कि:

नवाब मुलखय्यन को पुछ्यो,
सिंघ रिजक कहां ते खांहि।
नहि उगराही हल वाही,
नहि चाकरी बणज कमांहि ॥४॥
ओइ भुक्खे किम नांहि मराहीं।
दाणा पाणी जिन लब्भै नाहीं,
फौज टोले उन बंन के राहीं।
खोज टोल कै मारै ताहीं ॥६॥
जिन पिंडन मैं सिंघ को भयो।
सोई पिंड उजाड़ मैं दयो।
छोड गए वै अपणे देश।
भूखे होइ वटावैं भेस ॥७॥
रिज़क बिना कोई जीवै नांही।
ओइ किम जीवै रिजक बिनां ही।
पत्त साग खाइ मनुख कब जीवै।
जो जीवै तुरन जोग किम थीवै ॥९॥

शाही महलों में पलने वाले नवाब क्या जानें सिंघों की घालनाओं को जो उनको सिखी सिदक कायम रखने के लिए कमानी पड़ रही थीं! मुखबिरों में एक 'हरभगत निरंजनिया' भी था।

जिनके पूर्वजों की रक्षा नवम पातशाह ने की थी, उनमें से ही कई सरकार के मुखबिर बन कर शहीदी का मूल्य चुकाने की बजाय उसी गुरु की उम्मत के घातक बन बैठे थे। निरंजनिये ने जो उत्तर जकरिया खान को दिया वह 'प्राचीन पंथ प्रकाश' में इस प्रकार अंकित है:

हरभगत निरंजनीए यों फिर कही।
पूलहे पिंड इक माझे मही।
तारू सिंघ तहि खेती करै।
साथ पिंड वहि हाला भरै ॥१७॥
देह हाकम कछ थोड़ा खावै।
बचै सिंघन के पास पुचावै। . . .
शबद चौंकी गुर अपने की करे।
सो मरन ते नैक न डरे।

और :

गंगा जमना निकट न जावै।
अपने गुर की छपड़ी नावै। . . .*
रात तुरै, दिन बहि रहै, तुरकन आंख बचाइ।
सिर पर पंड उठाइ कै,
सिंघन पर पहुंचाइ ॥२२॥

यह था उस समय के सिंघों का सिखी जीवन! सिख सिवाय अकाल पुरख और श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के अन्य किसी को अपना इष्ट न मानते थे। यही कारण था सिंघों में निर्भीकता के गुण का। ये पुरातन गुरसिख *"निरभउ जपै सगल भउ मिटै"* के गुरु-वाक्य को जीवन का आधार मानते थे। तभी तो वे सिखी महल की नींवों को अपने रक्त से मजबूत कर सके।

हरभगत निरंजनिये ने भाई तारू सिंघ जी के बारे में अन्य कई झूठी शिकायतें मिर्च-मसाले लगाकर खान बहादुर के पास लगाईं तथा खान की बख्शिश का पात्र बना। जकरिया खान ने आगे से निरंजनिये को इस प्रकार कहा :

और तारू सिंघ इकल्ला जोऊ।
अहिदी जाइ लै आवै सोऊ।
बीस कु संग पयादे देउ।
रसतयों चौकस उस कर लेउ ॥२७॥

अत: जकरिया खान के हुक्म से निरंजनिया २० पैदल सिपाही लेकर भाई तारू सिंघ को गिरफ्तार करने के लिए चल पड़ा। वह बहुत खुश था कि वह भाई साहिब को गिरफ्तार करके हकूमत की निगाहों में स्वीकृत हो जाएगा।

सिपाही भाई तारू सिंघ जी को लेकर लाहौर पहुंचे और भाई जी को कारावास में बंद कर दिया गया तथा कई असहनीय और अकथनीय कष्ट दिये गए, परंतु :

जिम जिम सिंघ को तुरक सतावैं।
तिम तिम सिंघ मुख लाली आवै।
जिम जिम सिंघ कछु पीए न खाइ।
तिम तिम सिंघ संतोख है आइ ॥५॥ *(पृष्ठ ३६७)*

**श्री अमृत सर*

भाई तारू सिंघ जी को कचहरी में पेश किया गया। नवाब जकरिया खान तथा भाई साहिब के मध्य जो बातचीत हुई उसको स. रतन सिंघ जी भंगू इस प्रकार अंकित करते हैं :

तारू सिंघ नवाब बुलाया।
उनै अहिदीयन आन मिलाया।
वाहिगुरु की फतहै बुलाई।
अकाल अकाल कहि ऊच सुनाई। . . .
तारू सिंघ जी तब कहयो,
तूं सुन बात नवाब!
हम तुमरो न बिगाड़िओ,
तुम किम देत अजाब ॥३॥
जौ हम तुमरी भूम बिगरैं।
तौ तुमको पैसे भरैं।
औ जो वणज वपार करैं।
तौ भी तुमरो हाला भरैं।
तुम को दे के जो रहि जाइ।
सो हम अपने पेट न पाइ।
कहु तेरी क्या गाठों जाइ?
हम कु तुम किम देत सजाइ?

अत: भाई तारू सिंघ जी ने जकरिया खान को निर्भीक होकर कह दिया कि "हम भूमि का लगान तथा व्यापार का टेक्स अदा करते हैं। शेष जो लाभ हमें होता है या जो दाना-खाना बच रहता है, हम अपने तन को भूखा रख कर दूसरे जरूरतमंदों की भूख दूर करते हैं। हे नवाब! तू बता, इसमें तेरी गांठ से, तेरे पल्ले से क्या जाता है, जो हमको दण्ड दे रहा है?"

जकरिया खान भाई तारू सिंघ जी की सच्ची एवं खरी बातें सुन कर जल-भुन गया। उत्तर तो कोई सूझा न, बस एक ही उत्तर दिया जो उस जैसे जुनूनी मुसलमान हाकिम पहले भी अनेकों सिंघों को दे चुके थे :

नवाब कहै तूं हो मुसलमान।
तउ छाडांगा तुमरी जान।
सिंघ कहयो हम डर क्या जानों।
हम होवें किम मुसलमानों ॥७॥

इस संबंध में ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी 'तवारीख गुरू खालसा' भाग २ के पन्ना १४२ पर इस प्रकार लिखते हैं :

"जब दुख-सुख तथा मृत्यु से फिर भी (मुसलमान बन कर भी) छुटकारा नहीं होगा तो बेईमान क्यों होवें? (भाव अपना ईमान-धर्म क्यों छोड़ें?)"

नवाब फिर बोला :

फिर नवाब एही कही,
जिंद चहैं तां आवहु दीन।
और जु चाहैं मांग सो,
धन अर मुलख जमीन ॥९॥

यहां ही बस नहीं, नवाब ने और भी लालच दिये। वह कहने लगा :

औ मुगल पठाणन बेटी लेहु।
बीच हवेलन बास करेहु। . . .

इसका उत्तर भाई तारू सिंघ जी ने इस प्रकार दिया:

तूं जे हम पर हैं मिहरबान।
आख हमैं ना होहु मुसलमान।
तूं दस हमै कुछ ऐसे राहु।
केसीं सासीं होइ निबाहु ॥११॥

भाई तारू सिंघ जी का दृढ़ संकल्प देखकर, सिखी केशों-श्वासों संग निभाने की बात सुन कर, नवाब ने हुक्म दिया कि भाई तारू सिंघ जी की खोपरी उतार कर शहीद कर दिया जाए। अत: भाई साहिब ने असहनीय तथा अकथनीय दुख खिले माथे सहन् किये। उन्होंने खोपरी उतरवा कर शहीदी प्राप्त की तथा सिखी केशों-श्वासों संग निभाई।

यह साका पहली जुलाई, १७४५ को लाहौर में घटित हुआ। भाई साहिब की यह कुर्बानी सदियों तक सिख नवयुवकों का मार्ग-दर्शन करती रहेगी और वे भी सिखी को केशों-श्वासों संग निभाने के लिए दृढ़ संकल्प करते रहेंगे।

(सिख मिशनरी कॉलेज द्वारा प्रकाशित 'चोणवीआं साखीआं' में से आभार सहित)

कविता

श्री हरिमंदर साहिब के दर्शन करने के उपरांत

-डॉ. महेश 'दिवाकर'*

*कैसा अद्‌भुत दृश्य है, तन-मन हुआ निहाल।
रोम-रोम कहने लगा, धन्य गुरु सत् श्री अकाल।
मानव-मानव बीच में, सदा रहा सम्बंध।
अमृतसर आना हुआ, निभा दिया अनुबंध।
हुआ अचानक आगमन, अमृतसर-दरबार।
मानो लायी खींचकर, सतिगुरु की मनुहार।
भीनी-भीनी हो रही, अंबर से बौछार।
मानो अमृत झर रहा, सतिगुरु के दरबार।
मधुर-मधुर संगीतमय, संतों का संदेश।
संगत मिलकर ले रही, अमृत-सा उपदेश।
शबद-कीर्तन चल रहा, निकल रहे उच्छ्‌वास।
तन-मन हुआ विभोर है, मग्न हुआ उल्लास।
जलधि सरीखा सरोवर, श्री हरिमंदर विशाल।
देख धरा पर स्वर्ग को, जीवन हुआ निहाल।
स्वच्छ सरोवर, नील जल, ज्यों अमृत का सिंधु।
लिया आंचमन नेह का, धन्य हुआ उर-बिंदु।
जल-थल-नभ के मिलन का, कितना मनोहर बिंब।
बीच सरोवर स्वर्णमय, हरिमंदर प्रतिबिम्ब।
जनता और जनार्दन, करते यहां निवास।
जीवन औ' अध्यात्म का, अनुपम मिलन-विकास।
इसकी कर परिक्रमा, मन फूला न समाय।
'वाहिगुरु जी का खालसा', हृदय लिया बसाय।
जिस पल हरिमंदर गये, ले हाथों प्रसाद।
त्याग, समर्पण, भक्ति ने, मेटे सभी विषाद।
हरिमंदिर में बैठकर, गुरु से की अरदास।
मानवता का कीजिए, गुरुवर! सतत् विकास।
भटक गयी है लक्ष्य से, युग-मानवता आज।
खोटे उपक्रम कर रही, आती तनिक न लाज।
हिंसा औ' आंतक का, फैला हुआ जुनून।
किंकर्त्तव्य विमूढ़ सब, अंधा है कानून।
अपने-अपने स्वार्थ में, डूब रहे हैं लोग।
अपसंस्कृति-अन्याय का, फैल रहा है रोग।
बाल, युवा औ' वृद्ध के, सपने चकनाचूर।
मानव-जीवन हो गया, अब तो ज्यों नासूर।
मात-पिता-गुरुजन कहां, पाते अब सम्मान?
नाजुक रिश्ते भोगते, पग-पग पर अपमान।
नित नारी की अस्मिता, लूट रहे हैं बाज।
रक्षक-भक्षक बन गये, आती तनिक न लाज।
रही कहां वह सादगी, रहा न वैसा प्यार!
देख रहा चारों तरफ, गुरुवर! कैसी हार।
गुरुवर! कृपा कीजिए, सुन लो करुण पुकार।
बहुत हो चुका देख लो! अब तो हरो विकार।
मानवता का कीजिए, हे गुरुवर! उद्धार।
करुण कहानी दास की, तुमको रही पुकार।
हाथ जोड़ विनती करूं, दास करे अरदास।
गुरुवर! कृपा कीजिए, मिट जाये उपहास।
गाईड थे बतला रहे, नैन रहे अवलोक।
हरिमंदर 'उल्लास' है 'शरद आलोक'।
अमृतसर में रच रहा, नित्य नया इतिहास।
सहज, मनोहर, मंत्रमय, गुरबाणी-मधुमास।
मिला 'सिरोपा' भेंट में, और लिया प्रसाद।
'वाहिगुरु जी का खालसा', मिटा दिया अवसाद।
मनहर वादक-यंत्र और मधुर संगीत।
गूंज रही परिवेश में, गुरबाणी हे मीत!
हरिमंदर दिव्य-भव्य, खड़ा सोरवर बीच।
अमृत-रूपी नीर से, रहा गुरु-पद सींच।
हरिमंदर को देखकर, रहता नहीं गुमान।
देख रही दिव्यात्मा, बैठी बीच विमान।
पूर्व-जन्म शायद कर्म, फलित हुए हैं आज।
गुरबाणी अमृतमयी, भक्त-जनों को नाज।
गुरबाणी का विश्व में, फैल रहा आलोक।
पढ़े-सुने जो प्रेम से, तन-मन करे अशोक।*



*'सरस्वती भवन', मिलन विहार, देहली राजमार्ग, मुरादाबाद (उ. प्र.)

विशेष आलेख

गुरमुख

-स. नरिंदर सिंघ सोच (गुरपुरवासी)

भाव ध्वनियों के जन्मदाता हैं। ध्वनियां अक्षरों की जननी हैं। अक्षर शब्दों के पिता हैं। भाव शब्दों के बाबा (दादा) हैं और शब्द भावों के पौत्र हैं। शब्द, भावों की प्रतिमायें हैं, भावों के पांवचित्र हैं, भावों के चलचित्र हैं, ये भावों का बदल हैं। अकथ को कथा नहीं जा सकता, परंतु यदि कोई कथन करे तो केवल शब्दों के द्वारा ही किया जा सकता है। अगोचर को इंद्रियां अपनी सूक्ष्म बाहों में दबा नहीं सकतीं, परंतु शब्द ने उसका भी वर्णन कर दिया है। अगम, मन की पहुंच से परे है, परंतु शब्दों की पहुंच के भीतर है। अरूप आंखों से परे है, शब्दों से दूर नहीं।

गुरमति साहित्य में कुछ शब्द बार-बार प्रयोग किये गए हैं। उनका बहुत लम्बा-चौड़ा विवरण भी दिया गया है, परंतु हम उनकी पूर्ण एवं मुकम्मल तस्वीर कभी दिमाग में नहीं लेकर आए। उन शब्दों में गुरमुख, भक्त, संत, सेवक, जन, साध, आसक तथा सादक आदि हैं।

'गुरमुख' शब्द एक पूर्ण एवं मुकम्मल विशाल शख्सियत का नाम है। जिन अर्थों में यह गुरमति साहित्य में प्रयोग किया गया है, उन रूपों में अन्य कहीं नहीं प्रयोग किया गया। गुरु नानक साहिब जी ने गुरमुख के तीन काम बताये हैं। गुरमुख अपने प्रभु में लीन रहता है। वह समाधि में होता है। उसकी सुरति 'लिवतार' होती है। जब वह समाधि से उठता है तो वह कीर्तन में जुट जाता है। नौधा भक्ति में कीर्तन मुख्य भक्ति है। विचार करना, कीर्तन एवं यश गायन करना या समाधि में जुड़ जाना गुरमुखों के विशेष काम हैं।

गुरमुखों की समाधि कोई योग या हठ योग की समाधि नहीं, वह स्वाभाविक समाधि है, वह सहज समाधि है। हम कई बार दिन और साधारणतः रात को सोते हैं। एक छोटा-सा हिलोरा आता है, सारा शरीर झड़ जाता है, आंखें भीतर से, बाहर से बंद हो जाती हैं। सारा तनाव ढीला पड़ जाता है। नींद के प्याले को होंठ लगने की ढील होती है कि नींद का खुमार नस-नस में, अंग-अंग में समा जाता है। यह तो शरीर की नींद और खुमार है। समाधि में इंद्रियों की तरह मन झड़ जाता है, बुद्धि झड़ जाती है, चंचलता नहीं रहती। काम-क्रोध के जज्बे समाप्त हो जाते हैं, आंधी समाप्त हो जाती है। झांझे के गुजर जाने के बाद जो वर्षा टिक कर पड़ती है, 'तेरा जन' उस वर्षा में पूर्णतः लेट जाता है। लूओं तथा गर्मियों का जला शरीर और मन पूर्णतः शीतल हो जाता है। गुरमुखों की यही त्रिलोकी है—कीर्तन, विचार और समाधि।

प्राचीन काल में नहरें बहुत कम थीं। कई 'ओडे' होते थे जो पुराने ढहे हुए और मिट्टी में दबे हुए कुएं ढूंढ लेते थे। वे तीक्ष्ण दोपहर के वक्त वीरानों में घूमते थे। सूर्य की किरणों को धरती पर पड़ते देखते थे और उनको ज्ञात हो जाता था कि इतने फुट के घेराव में दबा हुआ कुआं है। गांव वाले पूरे जोरों के साथ मिट्टी निकालने के लिए जुट पड़ते थे और कुछ दिनों में उस कुएं से लोग पानी पीते, नहाते और चुबच्चों में पानी डाल कर बूरी व

कुंडी भैंसों एवं लोगों को पानी पिलाते थे। इसी प्रकार हमारे शरीर की धरती है। यह पूर्णत: वीरान है। इस पर भक्ख अलाप करते हैं, आंधियां तथा वायु-चक्र चलते हैं। जानवर और जीव प्यासे मरते हैं। इसके भीतर ज्योति का कुआं दबा हुआ है, उसके पानी सूखे पड़े हैं। टिंडें, गर्म रेत से भरी पड़ी हैं। भौणियां टूट कर मिट गई हैं। लज्जें (रस्सियां) मिट्‌टी बन चुकी हैं। उसकी मण की ईंटें भी इधर-उधर बिखर गई हैं। यदि कोई गुरमुख आ जाए, वह सेवक इस ज्योति के कुएं को बाहर निकाल लेता है। भाई बिधी चंद जी इस प्रकार से निकाले गए 'कुएं' थे। तुलंबे में सज्जण ठग भी एक दबा हुआ कुआं था। जिस दिन वह बाहर निकाल लिया, फिर जिबहखाने धर्मशाला बन गए, कौडे के तेल के कड़ाहे शीतल हो गए, बाल्मीकि बटवारा राहनुमा बन गया, चोर और डाकू रक्षक बन गए।

सागर बड़ा है। उसमें चलते बड़े-बड़े दरिया तथा लहरें धरती पर बहते दरियाओं से बड़े हैं। उनका ज्वार भी बड़ा है और उनका भाटा भी बड़ा है। उनकी बाईस-बाईस फुट की लहरें जहाजों को इकझोर कर रख देती हैं। परंतु गुरमुख सागर से भी अधिक गहरे व गंभीर हैं। उनके पानियों में ज्वार भाटा नहीं आता। उनकी लहरें डूबते जहाजों को नीचे से कंधा देकर तैराने के लिए हैं, डुबोने के लिए नहीं होतीं। उनकी गहराइयों में विनाशकारी जानवर नहीं रहते बल्कि सहायक शक्तियां होती हैं।

एक बेचारा जीव है और पचास फाहियां लगा कर इसको पकड़ कर मारने वाले हैं। फाहियों में पड़े चोगे चमक रहे हैं। उनको खाने और उनका स्वाद लेने के लिए मन में लहरें भी उत्पन्न हो गई हैं। दिन और रात दोनों जालों से भरे हुए हैं। एक-एक घड़ी तक एक-एक गला दबाने वाली फाही है। यह बेचारा जीव इनसे किस प्रकार बच सकता है? दुरमति फाहियां पैदा करती है परंतु गुरमुख शस्त्रधारी इन फाहियों को काटता रहता है, क्योंकि इन फाहियों की कैद लंबी है, जन्म-जन्मातरों की है।

बोली मनुष्य की परछाईं है। मनुष्य का साथ अभी तक पशुपन ने नहीं छोड़ा। वह शरीर करके बाघ नहीं परंतु उसकी भयंकरता उतनी बढ़ गई है जितना उसका शरीर कम हो गया। उसकी नौहंदरें (लम्बे-लम्बे नाखुन) खत्म हो गई हैं। उनके स्थान पर छोटे-छोटे नाखुन रह गए हैं। परंतु उसने मारने के लिए हाईड्रोजन बम बना लिये हैं। उसकी बोली के तीक्ष्ण तीर शस्त्रों से अधिक दुखदायक हैं। उसकी गालियों का विष तीन-तीन पीढ़ियों तक चढ़ता है। उसके अंधे जोश कौमों को जालिम बना देते हैं। मनुष्य का शरीर विकास ने बनाया और शोधा है, परंतु मनुष्य की भाषा निर्मल मन और निर्मल बुद्धि ने बनानी है। चलो मान लेते हैं कि मनुष्य ने कुदरत को जीत लिया है, परंतु उसके बड़े शत्रु उसके भीतर बैठे हैं। जितनी देर वह अपनी मूल प्रेरणा का रूपांतर नहीं करता, इनकी विनाशकारी, नीचे गिरने-गिराने वाली और पशु-आदतों का रूप नहीं बदलता, वह सच्चे अर्थों में विजयी नहीं। बोलियों को छूकर गुरमुख, देव-बोलियां बना देते हैं। आध्यात्मिकता भाषा को पवित्र बना देती है, गोहज एवं रहस्यमयी कर देती है, उसका रूप सुझाऊ कर देती है। विचारों और रागों और सौंदर्य-अनुभूतियों से बोली गहरी, मीठी और सुंदर हो जाती है। एक पत्थर, रगड़े जाने के पश्चात अंजन हो जाता है। गुरमुख अघड़-बोली को घड़-घड़ कर पूजनीय बना देता है। पंजाबी बोली को योगियों ने घड़ा, सूफियों ने घड़ा और गुरु साहिबान ने घड़-घड़ पूजनीय बना दिया।

लोग तिल नहीं रेता पेरते हैं। रेता में से तेल नहीं निकल सकता। लोग दही नहीं, पानी बिलोते है। पानी में से माखन नहीं निकल सकता। गुरमुख लोग तत्व को बिलोते हैं। जीव क्या है? रब्ब क्या है? माया क्या है? दुख क्या है? सुख क्या है? भला क्या है? बुरा क्या है? संयोग क्या है? वियोग क्या है? प्रगति क्या है? पिछड़ापन क्या है? इन तत्वों की खोज से कुछ परिणाम निकल सकते हैं। मूल ढूंढ लेने पर सभी पेचीदगियां दूर हो सकती हैं।

जितनी देर तक आंख के शीशे गंदे हैं, रंगदार हैं, मुड़े हुए हैं, चीजें सही रूप से नहीं दिख सकतीं। जितनी देर तक अज्ञान है, सभी वस्तुएं उलट-पुलट दिखती हैं, आम नीम और नीम आम दिखता है। जितनी देर तक धर्म अधर्म है, शरीर कायम रहते हैं, योनियों की समाप्ति नहीं होती। जितनी देर तक शरीर है, इसने पाप-पुन्य करते रहना है। जितनी देर तक राग और द्वेष की जड़ें गहरी हैं, पाप-पुन्य जड़ से उखाड़े नहीं जा सकते। अनुकूल और प्रतिकूल के ज्ञान के बिना राग-द्वेष दूर नहीं होते। जितनी देर तक भेद-ज्ञान कायम है उतनी देर तक अनुकूल-प्रतिकूल मिट नहीं सकते। भेद-ज्ञान की मां अविद्या है। सारा प्रपंच और उसका ज्ञान अपने स्वरूप के अज्ञान के कारण है। स्वरूप-ज्ञान के बिना दुखों का नाश नहीं होता। जितनी देर तक ये सभी पर्दे आंखों से दूर न हों सच्चा ज्ञान नहीं होता। गुरमुखों के नयनों में सत्य का निवास है, इसलिए उनको सत्य सरोवर दृष्टव्य होता है। वे सत्य सरोवर में स्नान करते हैं। वे नाम के चलूले रंग में बुद्धि को रंगते हैं। उनका रंग सदैव कायम रहता है। न वह मैला होता है, न उसको दाग लगता है।

मेघ मलार गायन करने से कहते हैं वर्षा पड़ जाती है, बिजलियां चमकने और कड़कने लगती हैं, काली घटायें उमड़ कर आ जाती हैं। गुरमुखों का एक अपने जीवन का मलार राग है। उसको गायन करने से सूखे हुए मन-तन शीतल हो जाते हैं, भुने हुए दाने उग पड़ते हैं; मनूर पारस हो निपटते हैं।

गुरमुखों का हरेक 'कर्म' धर्म होता है और उनका 'धर्म' कर्म होता है। वह जड़ नहीं चेतन होता है, निर्जीव नहीं प्राणधारी होता है। उनकी हरेक क्रिया सच की क्रिया होती है। वे सच के अमल होते हैं।

गुरमुख सौदा करते हैं परंतु मुनाफे वाला। उनका मुनाफा अपने आप को घाटा डालने वाला होता है, अपने आप को दूसरे से कुर्बान करना होता है, अपना बिगाड़ कर बेगाना संवारना होता है, सुख से दुख बंटाना होता है, विजय को पराजय में बदलना होता है, सम्मान होने पर भी निमाणा, तान होने पर भी नित्राण और अकल होने पर भी अनजान बनना होता है।

जागना और सोना कई प्रकार का है, परंतु जो गुरमुखों का जागना है, सच्चा जागना यह है। यह जागना केवल शारीरिक जागना नहीं, यह सामाजिक जागना है, भूगौलिक जागना है, मानसिक जागना है, बौद्धिक जागना है, वक्त अनुरूप जागना है। पंडित पुस्तकों में मस्त होकर सोये हुए हैं, योगी योग में मस्त होकर सोये हुए हैं, सन्यासी अपने अहंकार में लंबियां तानकर सोये हुए हैं। सभी मद में बेसुध सोये हुए हैं।

गुरमुख वैर नहीं डालते, दूरियां नहीं बढ़ाते। अंतर डालने गुरमुखों का काम नहीं है। गुरमुखों का संधियों के साथ मन मानता है। वे समझौतों पर बल देते हैं। वे गांठते हैं, तोड़ते नहीं हैं। वे जोड़ते हैं, फोड़ते नहीं है। वे करीब लाते हैं, दूर नहीं करते। वे मित्रता बढ़ाते और वैर कम करते हैं।

गुरमुखों को सारे संसार में से रब्ब की मंगलमयी आवाजें सुनती हैं। मीन को किसी ने बोलते नहीं सुना परंतु गुरमुखों को उसका जाप सुन गया है। मृग और पक्षी सब प्रभु का सिमरन करते हैं, हरहट (हरट) भी 'तू तू' का जाप कर रहा है।

गुरमुखों के बिना सारा संसार मैला है। गुरमुखों के बिना रात मैली है, दिन मैले हैं, महीने उज्जवल नहीं; सागरों के सीने में से निकले मोती मैले हैं, पत्थरों के सीने फाड़ कर निकाले हुए हीरे मैले हैं, हवायें मैली हैं, पानी मैले हैं, अग्नि भी मैली है। केवल हरि को स्मरण करने वाले गुरमुख ही निर्मल हैं।

गुरमुख प्रवृत्ति और निवृत्ति को जानते हैं कि किसमें लगना है और किस वस्तु को त्यागना है। गुरमुख अधिक बल आंत्रिक सूक्ष्म शक्तियों पर लगा कर उनको उजागर करते हैं। बाहरी स्वाद, मिट जाने वाले प्यार गुरमुख त्याग देते हैं। वे नेहुं निवेले के धारक बनते हैं।

गुरमुख सच बोते हैं, सच गोड़ते हैं और रूड़ी (घूरा) डालते हैं, सच की फसल का ढेर लगा कर धनाढ्य बनते हैं। वे सच की खेती करते हैं।

श्री गुरु अरजन देव जी ने एक ही शबद में गुरमुखों के काम का विवरण खोल कर दिया है। पहले चौबीस प्रश्न किये हैं :

(१) मुक्त कौन है? (२) युक्तिवान कौन है? (३) ज्ञानवान कौन है? (४) व्याख्याकार कौन है? (५) गृहस्थी कौन है? (६) उदासी कौन है? (७) कीमतें कौन पा सकता है? (८) जीव बंधनों में किस प्रकार बंधता है? (९) जीव का छुटकारा कैसे हो सकता है? (१०) जन्म-मरण कैसे दूर हो सकता है? (११) कर्मी कौन है? (१२) निहकर्मी कौन है? (१३) कहने वाला कौन है? (१४) कहाने वाला कौन है? (१५) सुखी कौन है? (१६) दुखी कौन है? (१७) सम्मुख कौन है? (१८) बेमुख कौन है? (१९) मिला कैसे जाता है? (२०) विछोड़ा कैसे पड़ता है? (२१) कौन-सा मंत्र है, जो योनियों से रक्षा करता है? (२२) वह कौन-सा उपदेश है, जिससे दुख-सुख समान हो जाते हैं? (२३) किस गति या रीति से सिमरन किया जाता है? (२४) कीर्तन किस तरह करना चाहिए?

१. गुरमुख ही मुक्त हैं, क्योंकि उन्होंने हउमै के सहारे काम करने बंद कर दिये हैं। वे कर्म करते हैं परंतु निष्काम, अपने गुरु को भेट चढ़ाते हैं। गुरमुख संसार में आते हैं, परंतु निशंक होकर जाते हैं, तो निशंक होकर वे अपने कर्मों के धकेले हुए संसार में नहीं आते और न ही कर्मों के मारे संसार में से मरते हैं। वे सागर की लहर की भांति अलग हुए अनुभव होते हैं, परंतु उस समय भी वे सागर का रूप होते हैं।

२. गुरमुख ही युक्तिवान हैं। युक्तिवान होने के कारण उनका रोना भी भक्ति है, उनका हंसना भी भक्ति है, उनका उठना भक्ति है तथा उनका बैठना भी भक्ति है, उनकी घोड़े पर सवारी भी भक्ति है, उनका महलों में रहना भी भक्ति है, उनका लड़ना भक्ति है, उनका वैरी को मारना भी भक्ति है। जो कुछ भी वे करते हैं वह सब भक्ति है। उनका सोना समाधि है। उनका जागना सिमरन है।

३. केवल गुरमुख ही ज्ञानवान हैं। ज्ञान पढ़ने से नहीं होता। जैसे-जैसे मनुष्य पढ़ता है, वह तो उलटा अधिक दुखी होता हुआ बंधनों में बंधता जाता है। हम दर्शन जानने का प्रयास करते हैं। हम रसायण की खोज करते हैं, इतिहास की खोज करते हैं, ब्रह्मांड के बारे में ज्ञात करते हैं परंतु सबसे कम इस बात पर बल लगाते हैं कि सारा ज्ञान किसको होता है, कौन है जो हमारे सुखोपति के आनंद को बयान करता है? रूपों से रूपों को मानने वाले (अथवा

इनका आनंद लेने वाले) के बारे में अधिक ज्ञात करना चाहिए और गुरमुख इसी ओर सारा ध्यान देते हैं, इसलिए गुरमुख ही ज्ञानी हैं।

४. केवल गुरमुख ही व्याख्याकार हैं। गुरमुख 'गूंगे की मिठाई' नहीं, वे वर्णन कर सकते हैं। वे अगोचर को जानते और जनाते हैं, अगम को पकड़ते और पकड़वाते, अनडिठ को देखते तथा दिखाते हैं। वे बिना आंखों के देखते और बिना कानों के सुनते हैं। वे बिना पैरों के चलते हैं और बिना हाथों के बड़े-बड़े काम करते हैं। वे बिना जिह्वा के बोलते हैं। वे पहले जीवित भाव से मरते हैं, उसमें लीन हो जाते हैं, फिर मरजीवड़े बन कर गहरे सागरों में गोते लगाकर मोती ढूंढ लाते हैं।

५. गुरमुख ही गृहस्थी बन सकते हैं। वे किसी को ठिठुरते देख कर अपने घोंसले का ईंधन जला सकते हैं और किसी भूखे को देख कर अपने घोंसले की अग्नि पर स्वयं भुज सकते हैं। वे विवाह के समय भाई भिखारी की तरह सस्कार का प्रबंध चुपचाप कर सकते हैं। वे दुखों की, भूखों की सदीवी मार को भी दाते की दात समझ कर चूम सकते हैं।

६. उदासी भी गुरमुख ही हो सकते हैं। वे वन और घर को एक जैसा समझ सकते हैं। एकांती एकांत में बैठने वाला नहीं, बल्कि जिसके हृदय में टिकाव है, वह एकांती है। गृहस्थी कंवल भी है परंतु वह अधिक उदासी है। उसका सारा ध्यान सूर्य की तरफ है। पानी की बूंद को वह झट तिलका देता है (अर्थात् एक ओर कर देता है)। जो बच्चों को अमानत समझ कर वापस कर देता है वही असल उदासी, त्यागी और सन्यासी है। जो मोह के कीचड़ में गले-गले तक नहीं धंसते वही उदासी हैं।

७. कीमतें भी गुरमुख पा (आंक) सकते हैं। एक आटे, दाने और भूसे की कीमतें होती हैं, परंतु कुछ सूक्ष्म सामाजिक और आध्यात्मिक कीमतें होती हैं तथा गुरमुख सूक्ष्म कीमतें पाते हैं। वे अपनी खिचड़ी के पीछे आंधी बंद नहीं करते। वे वक्ती लाभ नहीं बल्कि सदीवी लाभ के लिए सच्चा सौदा करते हैं। वह मां की कोख सफली करने के लिए रिहाई का रुक्का (कागज) लाने वाली मां को कह देता है, "मैं तो तुझे जानता नहीं! तू तो मेरी मां ही नहीं! यदि तू मेरी मां होती तो मुझे बेदीन (धर्महीन्) करने वाली कार न करती!"

८ जीव को बांधने वाली 'हउं' और 'मैं' है। सभी कर्मों का केंद्र 'हउं' या 'मैं' है। हउमै असाध्य रोग है। इसी के सहारे सारा आदान-प्रदान, दुख-सुख, जन्म लेना एवं मरण है, हंसना-रोना है, पुन्य-पाप है, मूर्ख और सियाना (बुद्धिमान) है। जहां हउमै है वहां प्रभु नहीं, जहां प्रभु है वहां हउमै नहीं। हउमै विकार है। हउमै वाले ऊंचे टीलों पर वर्षा का पानी नहीं रहता। माया का परित्याग सुगम है परंतु सूक्ष्म अहंकार छोड़ना कठिन है।

९. गुरमुख हउमै को दूर करके छुटकारा प्राप्त कर जाते हैं। जब जीव अहंकार करता है तो योनियों में भटकता है, परंतु जब यह स्वयं को तुच्छ जानता है, सभी ओर प्रभु नजर में पड़ता है। जब एक दूसरे को बुरा और स्वयं को अच्छा समझता है तो जानो इसके चारों ओर फाहियां हैं, परंतु जब यह 'मेरा-तेरा' दूर कर देता है, फिर शेष कोई बुरी चीज इसके करीब नहीं फड़क सकती।

१०. गुरमुखों का आना-जाना एक खेल है, जैसे स्टेज पर एक नट भेख बना कर आता है, अपना पार्ट अदा करता है और चला जाता है, जैसे मनुष्य सपने की एक दुनिया अपने आप में से पैदा कर लेता है, उसको स्वयं ही आनंद लेता है और फिर खत्म कर देता है, गुरमुखों

का आना-जाना इसी तरह का है।

११. गुरमुख कर्मयोगी हैं। वे दिन-रात एक करके काम करते हैं। वे एक आयु में कई आयुओं का काम कर जाते हैं। उनकी एक हरकत भी निष्फल नहीं जाती। वे अपनी सारी शक्ति किसी आदर्श के लिए व्यय करते हैं। यह संसार कर्मभूमि है और गुरमुख कर्मों के खुले खेत बोते और काटते हैं।

१२. गुरमुख ही निहकर्मी हैं। वे कर्म करते हुए भी निहकर्मी हैं, क्योंकि वे कर्म **'मैं'** के सहारे नहीं करते। कर्म करके वे कर्मों के फलों को भिखारियों की तरह नहीं मांगते। गुरमुखों के हाथ होते हैं, परंतु कर्म करने की शक्ति प्रभु की होती है। वह गुरमुखों की आंखों की खिड़कियों में बैठकर देखता है, गुरमुखों के कानों में बैठकर सुनता और गुरमुखों की जिह्वा पर बैठकर चखता है। इसलिए गुरमुख तो एक साधन ही रह जाते हैं, करने करवाने वाला वह (प्रभु) स्वयं होता है।

१३. गुरमुख ही कहने वाला होता है। उसने वह कहना है जो उसने स्वयं देखा है, स्वयं अनुभव किया है, स्वयं ढूंढा है, स्वयं कशीदा है और जिसकी स्वयं छानबीन की है। करनी के बिना कहना नीचता वाला है। सारा जग ज्ञानी है परंतु आचारी कोई नहीं। सारा संसार पंडित है परंतु विचार वाला कोई नहीं। चीनी कहने से चीनी का स्वाद नहीं आता, चांद कहने से अंधकार दूर नहीं होता और सूर्य कहने से शीत दूर नहीं होती। गुरमुखों की रहनी ही कहनी है, इसलिए उनका प्रभाव बहुत पड़ता है। जग कौआ है, इसका ज्ञान केवल चोंच ज्ञान है। कहने के लिए आलिम बाअमल चाहिए।

१४. श्रोते भी गुरमुख होते हैं। वे शबद के आशिक होते हैं। वे ज्योति के पतंगे होते हैं। वे सम्मुख होकर तीरों को सीने में खाते हैं। शबद की चोट तीर की नोक से अधिक तीखी और पीड़ा वाली होती है। उनके सुनने के लिए कान होते हैं, उपदेश की स्वांति बूंदों को लेकर मोतियों का रूप दे देते हैं। वे चेतन्य होकर मृगों की भांति सुनते हैं।

१५. गुरमुख ही सुखी हैं। उनके पास सदीवी सुख होता है। वे सब में बरतते हैं, आनंद में घूमते हैं और प्रकाश में उड़ते हैं। उनका सुख देश और काल से परे होता है, इसलिए वह कायम रहता है। वे बंद-बंद कटवाते, खोपरियां उतरवाते और अपने आप को आरों के साथ कटाते हुए भी भजनानंद और परमानंद में लीन होते हैं।

१६. मनमुख दुखी होते हैं। उनका मुख अंधेरे की ओर होता है। वे नीचे को कीचड़ की ओर जाते हैं। वे वक्ती (अस्थिर) चीजों को महान समझते हैं, क्षणिक सुखों के लिए मारे-मारे घूमते-फिरते हैं।

१७. गुरमुख ही सम्मुख हैं। बंदूक के निशाने परखने के लिए वे अपना सीना आगे कर देते हैं। महलों में बसने की जगह वे चूने के साथ चिनी ईंटों में जड़े जाना अधिक पसंद करते हैं। वे बीन की भांति सीधे निशाने पर पहुंचते हैं।

१८ मनमुख बेमुखिये हैं। वे परीक्षा के समय भाग जाते हैं, सम्मुख होकर शहीद होने की जगह दुर्ग की दीवार से गिर कर टांगें तुड़ा लेते हैं। मनमुख स्त्रियां पति से बिछुड़कर वियोग भाव का अनुभव नहीं करतीं। मनमुख हाथों में खंडा लेकर भी भागने के रास्ते ढूंढने लग पड़ते हैं।

१९. गुरमुख बन कर मिला जाता है, अपना आप मिटा कर अथवा अस्तित्व समाप्त करके तथा उसमें लीन होकर।

२०. मनमुख बिछुड़े हैं, क्योंकि उन्होंने प्रभु से दूर जाने वाले रास्तों को चुन लिया है।

२१. शबद के अर्थ पर चलने से **'गुरमुख'**

का मन दौड़ने से रुक जाता है। गुरमुख गुरु की ओर मुख रखने से गुरु में समा जाते हैं। अपने आप को ढाल कर उस प्रकार के बन जाते हैं। वे अपनी मर्जी गुरु की मर्जी के अधीन कर देते हैं।

२२. गुरमुखों का चलन ही एक उपदेश है। जैसे वे दुख-सुख को, लाभ-हानि को, सोने और मिट्टी को एक जैसी अनुभव करते हैं, उसी प्रकार श्रोते भी उनके पद-चिन्हों पर चलते हैं। जो कुछ कहने वाले के पास है, वही कुछ श्रोते को मिलना है।

२३. गुरमुखों के सिमरन की रीति है श्वास-श्वास नाम जपना। उनके रोम-रोम में से सिमरन की आवाज निकलती है। कूंज की भांति भजन, कच्छू की भांति ध्यान और हंस की भांति विवेक। यह है गुरमुखों का ज्ञान, ध्यान और सिमरन।

२४. गुरमुख बनकर कीर्तन करना चाहिए। कीर्तनिया अपने गुरु को ध्यान में रखता है। वह महसूस करता है कि उसका गुरु चौकड़ा मार कर उसके सामने बैठा कीर्तन सुन रहा है। कीर्तनिया बाणी के भावों में पिघल कर बाणी का रूप हो जाता है। उसकी आवाज स्वर के साथ-साथ जज्बे का रूप हो जाती है। इस एकाग्रता तथा इन भावों का ही संगत पर प्रभाव पड़ता है।

यह धरती धर्मसाल है और गुरमुखों के लिए यह बनाई है, परंतु चोर कब्जा करके बैठ गए हैं। गुरमुख कभी बूढ़े नहीं होते। उन पर उत्साह में यौवन का जोश रहता है। गुरमुखों के किये काम ही प्रभु को स्वीकृत होते हैं। गुरमुखों पर कभी अज्ञान का प्रभाव नहीं होता।

पावन शबदों में से कुछ पंक्तियां जिनके आधार पर यह आलेख लिखा है :

१. गुरमुखि नादं गुरमुखि वेदं
गुरमुखि रहिआ समाई ॥ (पन्ना २)
२. गुरमुखि हसै गुरमुखि रोवै ॥
जि गुरमुखि करे साई भगति होवै ॥
(पन्ना १४२२)
३. गुरमुखि आवै जाइ निसंगु ॥ (पन्ना ९३२)
४. गुरमुखि सउदा जो करे
हरि वसतु समाले ॥ (पन्ना ३०९)
५. गुरमुखि सची आसकी
जितु प्रीतमु सचा पाईऐ ॥ (पन्ना १४२२)
६. गुरमुखि संधि मिलै मनु मानै ॥ (पन्ना २२८)
७. जागत सोवत बहु प्रकार ॥
गुरमुखि जागै सोई सारु ॥ (पन्ना ११९४)
८. सभ मद माते कोऊ न जाग ॥ (पन्ना ११९३)
९. गुरमुखि बीजे सचु जमै सचु नामु वापारु ॥
(पन्ना ४२८)
१०. गुरमुखि बाणी अघड़ु घड़ावै ॥ (पन्ना ९४१)
११. गुरमुखि मलार रागु जो करहि
तिन मनु तनु सीतलु होइ ॥ (पन्ना १२८५)
१२. गुरमुखि वैर विरोध गवावै ॥
गुरमुखि सगली गणत मिटावै ॥ (पन्ना ९४२)
१३. इहु सरीरु सभु धरमु है
जिसु अंदरि सचे की विचि जोति ॥
. . . कोई गुरमुखि सेवकु कढै खोति ॥ (पन्ना ३०९)
१४. कउणु सु मुकता कउणु सु जुगता ॥
कउणु सु गिआनी कउणु सु बकता ॥
कउणु सि गिरही कउणु उदासी
कउणु सु कीमति पाए जीउ ॥१॥
किनि बिधि बाधा किनि बिधि छूटा ॥
किनि बिधि आवणु जावणु तूटा ॥
कउण करम कउण निहकरमा
कउणु सु कहै कहाए जीउ ॥२॥
कउणु सु सुखीआ कउणु सु दुखीआ ॥
कउणु सु सनमुखु कउणु वेमुखीआ ॥
किनि बिधि मिलीऐ किनि बिधि बिछुरै
इह बिधि कउणु प्रगटाए जीउ ॥३॥ (पन्ना १३१)

हिंदी अनुवाद : सुरिंदर सिंघ निमाणा
सहायक संपादक।

भूला काहे फिरहि अजान

*-डॉ. गुरबचन सिंघ**

मनुष्य को सही मार्ग सच्चे गुरु के बताए ज्ञान से ही मिलता है। गुरमति क्या है? गुरु का उपदेश अर्थात् वह शिक्षा, वह ज्ञान जो हमें गुरु ने दिया है। साहिब श्री गुरु ग्रंथ साहिब जिन्हें हमने मन, कर्म और वचन से गुरु माना है, केवल एक 'ग्रंथ' नहीं हैं अपितु पूर्ण रूप से पूजनीय 'गुरु' हैं। एक ऐसे सम्पूर्ण गुरु जो सृष्टि की रचना से लेकर मनुष्य के रूप में विकास तक, मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक तथा मृत्यु के पश्चात् आत्मा के परमात्मा में विलीन होने तक, पूर्ण यात्रा तक अपने उपदेश द्वारा सम्पूर्ण पथ को प्रकाशमान करते हैं। सभी वनस्पति, जीव-जन्तु, पशु एवं मनुष्य में अकाल पुरख परमात्मा विद्यमान हैं। गुरबाणी में माना गया है कि:

अंडज जेरज उतभुज सेतज तेरे कीते जंता ॥
एकु पुरबु मै तेरा देखिआ तू सभना माहि रवंता ॥ *(पन्ना ५९६)*

फिर चाहे ये अंडज हों जिनकी उत्पत्ति अन्डे द्वारा होती है, जेरज अर्थात् पशु की श्रेणी के हों, उतभुज अर्थात् वृक्ष, वनस्पति, बेल आदि श्रेणी के हों अथवा सेतज अर्थात् मक्खी, मच्छर, कीटाणु आदि श्रेणी के हों। गुरबाणी कहती है कि हे परम पिता! हे अकाल पुरख! वे अंडज, जेरज, उतभुज, सेतज सभी प्रकार के जीव सब तेरे ही पैदा किए हुए हैं और मैंने तेरी एक विशेषता भी देखी है कि तू स्वयं इन सब जीवों में विद्यमान है।

मनुष्य के शरीर का विकास कैसे हुआ? जिस रूप में आज मनुष्य का शरीर है इस रूप में कैसे विकसित हुआ? इस विषय में गुरबाणी वैज्ञानिक पद्धति से ही मनुष्य के जीवन के विकास के बारे में कहती है। फर्क केवल इतना है कि वैज्ञानिक भौतिक रूप से संसार के विकास की बात करते हैं जबकि सतिगुरु पहले उस सर्वशक्तिमान अकाल पुरख, परमात्मा, वाहिगुरु, रब्ब की बात करते हैं। फिर उस अकाल पुरख के हुक्म से, उस परमात्मा की आज्ञा से इस संसार की उत्पत्ति की बात कहते हैं। सतिगुरु जी ने बाणी को परमात्मा का आदेश कहा। इसे 'धुर की बाणी' अर्थात् प्रभु की स्वयं की बाणी कहा। यह बाणी कोई कविता या काव्य नहीं थी जिसे कवि ने अपने विवेक से सोच-विचार कर लिखा था। यह बाणी तो परम पिता परमेश्वर द्वारा दिया गया वो संदेश है जो उन्होंने श्री गुरु नानक देव जी के द्वारा संसार को दिया है। जब भी श्री गुरु नानक देव जी को दिव्य संदेश आता तो वे भाई मरदाना जी को कहते, "भाई मरदाना! रबाब उठा, बाणी आई आ" और उस बाणी को राग में अलापते। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उच्चरित बाणी की भाषा परिपूर्ण है। इसमें फारसी, पंजाबी, हिन्दी व संस्कृत भाषा का ऐसा समावेश है जो साधारणतया एक बहुत पढ़ा-लिखा और इन सब भाषाओं का ज्ञाता ही कर सकता है।

गुरबाणी में मनुष्य के जन्म से लेकर मृत्यु तक हर समय के जीवन के लिए उचित मार्गदर्शन है। आवश्यकता है उस राह पर

३-ए, सादुल कॉलोनी, तुलसी सर्किल, बीकानेर (राज.)

चलने की, उस ज्ञान को अन्तर्मन में बसाने की। धर्म-ग्रंथों का अध्ययन करके हम ज्ञान तो प्राप्त कर सकते हैं परन्तु जब तक हम उस ज्ञान का जीवन में उपयोग न करें वो हमारे लिए अर्थपूर्ण नहीं होता। हमने भोजन अर्जित तो कर लिया पर यदि हम उसे सामने रख कर बैठे रहे और खाएं ही नहीं तो क्या हमारी क्षुधा शांत हो सकती है? नहीं। हमने गहरे कुएं से पानी निकाल तो लिया अगर पिया ही नहीं तो क्या हमारी प्यास बुझ सकती है? कदापि नहीं। इसी प्रकार हमने धर्म-ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त कर तो लिया परन्तु उसे बाहर ही रखा, अपने हृदय में नहीं उतारा, जीवन में नहीं ढाला तो वो सारा अमूल्य ज्ञान भी हमारे लिए सहायक सिद्ध नहीं हो सकता है, उससे हम जीवन की सच्चाई तक नहीं पहुंच सकते। गुरबाणी कहती है :

अंधे अकली बाहरे मूरख अंध गिआनु ॥
नानक नदरी बाहरे कबहि न पावहि मानु ॥
(पन्ना ७८९)

अर्थात् केवल अंधे ज्ञान से सच का अनुभव नहीं हो सकता। यदि ध्यान वाह्यमुखी है, अन्तर्मुखी नहीं है तो परमात्मा को नहीं पाया जा सकता अर्थात् कोरा ज्ञान तब तक सार्थक नहीं जब तक हम उस ज्ञान के प्रकाश से अंदर तक नहीं पहुंच जाते। उस ज्ञान द्वारा हृदय तक पहुंच कर आत्मा रूपी परमात्मा के दर्शन नहीं कर लेते।

जीवन का प्रारंभ इस शरीर की रचना से शुरू होता है। यह शरीर भी तो उसी प्रभु का दिया हुआ है। जिन पांच तत्वों से यह शरीर बना है वो पांचों तत्व भी तो उस परमात्मा ने बनाए हैं। गुरबाणी में भी कहा गया है :

साचे ते पवना भइआ पवनै ते जलु होइ ॥
जल ते त्रिभवणु साजिआ घटि घटि जोति समोइ ॥
निरमलु मैला ना थीऐ सबदि रते पति होइ ॥
(पन्ना १९)

अर्थात् यदि हम इस सृष्टि की रचना को देखते हैं तो बाणी कहती है कि सत्यस्वरूप से यानि परमात्मा से पवन की उत्पत्ति हुई, पवन से जल बना और जल से इस सृष्टि का निर्माण हुआ, जिसमें मनुष्य का शरीर बना और उस शरीर में मन तथा हर मन अथवा शरीर में ज्योति समाई रखी अर्थात् घट-घट में प्रभु का निवास है। जो मन गुरु के शबद के साथ रहता है वो हमेशा निर्मल रहता है, मैला नहीं हो सकता, उसकी पत्त यानी साख हमेशा बनी रहती है।

वैज्ञानिक कहते हैं कि इस पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से हुई है, इस संसार में जीवन सूर्य के कारण है। यदि सूर्य न हो तो ऊष्णता नहीं होगी, बर्फ ही बर्फ होगी, पानी भी नहीं होगा, रोशनी भी नहीं होगी, अन्धकार ही अन्धकार होगा। वैज्ञानिक कहते हैं कि सूरज का ही एक टुकड़ा टूट कर अलग हुआ जो धीरे-धीरे ठंडा हुआ और कालान्तर में चट्टान के रूप में पृथ्वी बनी। पवन के ठंडा होने पर वह जल के रूप में परिवर्तित हो गई। इस जल में वनस्पति पैदा हुई। इस वनस्पति पर छोटे-छोटे जीव-जंतु पैदा हुए और धीरे-धीरे विकसित होते हुए पशु-पक्षियों और मानव का आकार लेने लगे। सभी ज्ञानी एवं अनुभवी-जन भी यही मानते हैं कि हमारा यह स्थूल शरीर पांच तत्व का बना हुआ है—पृथ्वी, वायु, अग्नि, जल और आकाश। इन पांच तत्वों के मिलने से मनुष्य पैदा होता है और अन्त में इन्हीं पांच तत्वों में समा जाता है। इसके भीतर की सूक्ष्म आत्मा, कभी नहीं मरती। हमारी सब इच्छाएं, कामनाएं, वासनाएं इस मन से जुड़ी रहती हैं। अगर हमारा मन जीवन में गुरमति की राह पर

चलता है तो मनुष्य का जीवन सम्पूर्ण हो जाता है, उसे मोक्ष प्राप्त हो जाता है, वह इस संसार के आवागमन से मुक्त हो जाता है, नहीं तो उसे बार-बार जन्म लेना पड़ता है, बार-बार मरना पड़ता है। माटी से ही हम पैदा होते हैं और अंत में माटी में ही मिल जाते हैं। भक्त कबीर जी ने कहा है :

कबीरा धूरि सकेलि कै पुरीआ बांधी देह ॥
दिवस चारि को पेखना अंति खेह की खेह ॥
(पन्ना १३७४)

अर्थात् धूल यानि रेत इकट्ठी करके एक पुड़िया बांध दी, जिसे नाम दे दिया देह अर्थात् शरीर। यह तो चार दिन का तमाशा है, खेल है। जो दिखाई दे रहा है वो तो चार दिन का है और अंत में तो इस शरीर को मिट्टी ही हो जाना है।

यह तो एक अकाट्य सत्य है कि आदमी पैदा मिट्टी से होता है और अंत में उसी मिट्टी में मिल जाता है। फिर क्यों भटकता है मनुष्य अपने जीवन में? शायद भोजन की खोज में।

मनुष्य को शरीर को बनाए रखने के लिए पहली आवश्यकता भोजन की है। पैदा होते ही मां का दूध उसका भोजन है। कुछ दिन का होने पर गाय, भैंस, बकरी का दूध उसका भोजन है। कुछ महीने का होने पर जानवर के दूध के साथ डिब्बे का दूध या कोई और पौष्टिक पदार्थ उसका भोजन बनते हैं। धीरे-धीरे वह रोटी-सब्जी-दाल को अपना भोजन बना लेता है। इसी भोजन से उसके शरीर का विकास होता है, अस्थि, मांस, चर्बी व खून बनता है। इसी भोजन को कमाने के लिये बड़ा होने पर मनुष्य अपना सारा जीवन निकाल देता है। इसी के लिए मेहनत, मजदूरी करता है, दुकानदारी, व्यापार करता है, खेत खलिहान जोतता है, कारखाने लगाता है, उद्योग लगाता है, डॉक्टर, वकील, शिक्षक, इंजीनियर बनता है। कर्म अपना मनुष्य का धर्म है। श्री गुरु नानक देव जी ने तो संतों, पीरों, फकीरों को भी भीख मांगने से मना करके, कर्म करने के लिए कहा है:

गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ ॥
ता कै मूलि न लगीऐ पाइ ॥
घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)

अर्थात् अपने आप को गुरु या पीर कहलाने वाला अगर भीख मांगने जाता है तो उसके पैर कभी मत छुओ। जो अपने दोनों हाथों की कमाई करके खाता है और अपनी सामर्थ्य के अनुसार हाथ से दान करता है, दीन-दुखियों की सहायता करता है, वो ही उस परमात्मा का मार्ग जानता है।

गुरमति में अपने हाथों से कमा कर खाने को ही श्रेष्ठ माना गया है, अपने हक की कमाई को ही श्रेष्ठ माना है। श्री गुरु नानक देव जी ने फरमाया है :

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
गुरु पीरु हामा ता भरे जा मुरदारु न खाइ ॥
(पन्ना १४१)

अर्थात् हिन्दू गाय को पवित्र मानता है, मुसलमान सूअर को पवित्र मानता है। गुरु जी का कथन है कि पराया हक खाना मुसलमान के लिये सूअर खाने के समान है और हिन्दू के लिए गाय खाने के समान है। गुरु, पीर और पैगंबर भी केवल उसी की जिम्मेवारी लेते हैं जो पराया हक नहीं खाता। हक-हलाल की कमाई को ही गुरु साहिब ने असली उपासना माना है। मुसलमानों की पूजा की पद्धति दिन में पांच बार नमाज पढ़ने की है। इस बाबत गुरु नानक साहिब ने कहा है :

पंजि निवाजा वखत पंजि पंजा पंजे नाउ ॥
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ ॥
चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ ॥
(पन्ना १४१)

अर्थात् मुसलमान की पांच नमाजें हैं। इन पांचों के लिए अलग-अलग पांच समय हैं। इन पांचों नमाजों के अलग-अलग नाम हैं। लेकिन असल में :

- सच बोलना सुबह की पहली नमाज है।
- हक की कमाई दूसरी नमाज है।
- खुदा से सबकी खैर, सबका भला मांगना तीसरी नमाज है।
- अपनी नीयत, अपना मन साफ रखना चौथी नमाज है।
- खुदा की, परमात्मा की, अल्लाह की उसतति करना पांचवीं नमाज है।

इस प्रकार हक की कमाई से प्राप्त भोजन को गुरबाणी में खुदा की बंदगी, प्रभु की पूजा माना गया है।

अपने जीवन-काल में अपनी पहली उदासी के समय श्री गुरु नानक देव जी अपने एक सिख भाई लालो के पास पहुंचे और उसी के यहां भोजन करते थे तथा वहीं कीर्तन व नाम-सिमरन करते थे। उसी समय सैदपुर के दीवान मलिक भागो ने ब्रह्मभोज का आयोजन किया। श्री गुरु नानक देव जी को भी बुलाया। मगर जब उसको पता चला कि श्री गुरु नानक देव जी भोजन ग्रहण करने नहीं आये तो उसने इसमें अपना अपमान समझा। उसने आदमी भेज कर गुरु जी को बुलाया और पूछा कि आप मेरे ब्रह्मभोज में क्यों नहीं आए? गुरु जी ने कहा कि आप अपना भोजन मंगवाइए अगर वह ग्रहण करने लायक होगा तो हम अवश्य ग्रहण कर लेंगे। मलिक भागो ने विभिन पदार्थों, हलवा, पूरी, खीर, सब्जी से सजी थाली मंगवाई। उधर गुरु जी ने भाई लालो से उसकी रूखी-सूखी रोटी भी मंगवा ली। गुरु जी ने कहा, "ऐ मलिक भागो। तेरा ब्रह्मभोज दूसरों का हक मार कर, गरीबों का खून निचोड़ कर तैयार किया गया है और उधर भाई लालो ने अपनी सच्ची कमाई से भोजन तैयार किया है। तेरे भोजन में हमें गरीबों का निचोड़ा खून नजर आ रहा है और भाई लालो की रोटी में अमृत। अब तू ही बता कि हम कौन-सा भोजन खाएं? तब मलिक भागो ने अपनी भूल स्वीकार की एवं भविष्य में हक-हलाल की कमाई करने का प्रण लिया। गुरमति कहती है कि किसी का हक मारना उसका खून पीने के बराबर है। हमारे कपड़ों में जरा-सा खून लग जाए तो हमें घृणा होने लगती है, फिर हम किसी का खून कैसे पी सकते हैं? श्री गुरु नानक देव जी ने फरमाया है :

जे रतु लगै कपड़ै जामा होइ पलीतु ॥
जो रतु पीवहि माणसा तिन किउ निरमलु चीतु ॥
नानक नाउ खुदाइ का दिलि हछै मुखि लेहु ॥
अवरि दिवाजे दुनी के झूठे अमल करेहु ॥
(पन्ना १४०)

अर्थात् यदि हमारे वस्त्रों पर लहू लग जाता है तो वे अपवित्र हो जाते हैं, जामा पलीत हो जाता है। इस जामे को पहन कर नमाज नहीं पढ़ी जा सकती। जो मनुष्य दूसरों का लहू पीते हैं उनका मन कैसे शुद्ध हो सकता है? प्रभु का नाम साफ मन से उच्चारण करो। केवल मुंह से कुल्ला करने से, मुंह साफ करने से कुछ नहीं होगा। मन साफ करना बहुत जरूरी है। बाकी यह सब काम तो केवल दिखावा है। हम ज्यादातर झूठे काम करके झूठ पर अमल कर रहे हैं।

इस उपभोक्तावाद के भौतिक युग में हम रिश्वतखोरी, कालाबाजारी, मुनाफाखोरी का धंधा

कर रहे हैं। जिस भोजन के लिए हम अपना सारा जीवन प्रभु को भूल कर उल्टे रास्ते चल कर बर्बाद कर रहे हैं उस भोजन की व्यवस्था तो प्रभु ने हमारे लिए हमारे जन्म से पहले ही कर रखी है। परमात्मा इस संसार के सब जीव-जन्तुओं के भोजन की व्यवस्था करता है, फिर मनुष्य क्यों चिंता करता है? श्री गुरु अरजन देव जी का फरमान है :

काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ ॥

सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ ॥ (पन्ना ४९५)

अर्थात् हे मन! तू चिंता क्यों करता है, जबकि परमात्मा स्वयं तेरे लिए फिक्र कर रहा है। उसने जो जीव चट्टानों और पत्थरों में पैदा किए हैं, उनके लिए भी रोजी-रोटी उनके सामने रख रखी है।

मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सि तरिआ ॥

गुर परसादि परम पदु पाइआ सूके कासट हरिआ ॥ (वही)

अर्थात् हे मेरे प्यारे! हे मेरे माधउ! जो साधसंगति करता है वो ही तैर कर पार उतरता है, वो गुरु की कृपा से ही परम पद की प्राप्ति कर सकता है। गुरु की कृपा हो जाए तो सूखी लकड़ी, सूखा पेड़ भी हरा हो जाता है।

जननि पिता लोक सुत बनिता कोइ न किस की धरिआ ॥

सिरि सिरि रिजकु संबाहे ठाकुरु काहे मन भउ करिआ ॥ (वही)

अर्थात् माता, पिता, लोक, पुत्र एवं स्त्री कोई भी किसी का सहारा नहीं हैं। प्रत्येक इंसान को, प्रत्येक जीव को मालिक आहार पहुंचाता है।

ऊडै ऊडि आवै सै कोसा तिसु पाछै बचरे छरिआ ॥

उन कवनु खलावै कवनु चुगावै मन महि सिमरनु करिआ ॥ (वही)

कूंज (पक्षी) उड़ती-उड़ती सैकड़ों कोस दूर से आ जाती है। उसने अपने बच्चों को पीछे छोड़ रखा है, जहां से वह उड़ कर आई है। उन्हें कौन खिलाता है, कौन दाना चुगाता है, क्या तूने मन में इसका कभी ख्याल किया है? वो परमात्मा ही उनकी व्यवस्था करता है। कूंज तो केवल मन में उनकी याद रखती है। इसलिए मनुष्य को भोजन के लिए जल्दबाजी में आकर पाप-कर्म नहीं करना चाहिए, दूसरे का हक नहीं छीनना चाहिए, लूट-खसूट करके पाप का भागी नहीं बनना चाहिए।

भक्त नामदेव जी ने फरमाया है :

सिंघच भोजनु जो नरु जानै ॥

ऐसे ही ठगदेउ बखानै ॥ (पन्ना ४८५)

जो मनुष्य लूटमार के भोजन पर रहता है, जो शेर-चीते की तरह दूसरों को मार कर खाता है, उसे मनुष्य नहीं बल्कि ठगों का देवता कहते हैं।

गुरमति कहती है कि हमें ये मनुष्य-देह मिली है, अब प्रभु से मिलने की व्यवस्था करें। जो जीवन हम जी रहे हैं, क्या यही जिंदगी है? नहीं। हम बहुत बड़ी भूल कर रहे हैं। हमने भौतिक साधनों की व्यवस्था कर लेने को ही जिंदगी समझ लिया है। जीने के लिए भोजन, मकान, परिवार सबकी आवश्यकता है और इसके लिए हम कितने पाप-कर्म करते हैं, परन्तु यह जिंदगी नहीं है, केवल जीने के साधन मात्र हैं। जिंदगी तो अब शुरू होगी। जहां से आये हैं वहां जाना है। परमात्मा से आया है, परमात्मा के पास जाना है। इसके लिए गुरमति ने राह दिखाई है।



मनि साचा मुखि साचउ भाइ

-डॉ. नरेश*

'मन साचा' का अर्थ है सोच का सात्त्विक-सकारात्मक होना। सोच का निर्माण ऊर्जा करती है। सोच से व्यक्ति का व्यवहार बनता है और व्यवहार से उसकी पहचान बनती है।

ऊर्जा दो प्रकार की होती है—सकारात्मक ऊर्जा तथा नकारात्मक ऊर्जा। सकारात्मक ऊर्जा ध्यान से, प्रभु-भजन से, ईश-स्मरण से, ईश-चर्चा से, सतसंगति से बनती है। नकारात्मक ऊर्जा निन्दा-चुगली से, पाप-कर्मों से, दूषित विचारों से, कुसंगति से बनती है।

हमारी समस्या यह है कि हम सवेरे से ही मस्तिष्क में नकारात्मक ऊर्जा भरनी शुरू कर लेते हैं। सुबह हम अखबार पढ़ते हैं, जिसकी अधिकतर खबरें नकारात्मक ऊर्जा को जन्म देती हैं। बलात्कार, हत्या, मारपीट, अपहरण, भ्रष्टाचार तथा राजनीतिक उठापटक जैसी सभी खबरें हमें नकारात्मक ऊर्जा प्रदान करती हैं। अखबार की विक्री ही नकारात्मक समाचारों पर निर्भर करती है। अखबार सकारात्मक समाचार छापेगा तो उसे पढ़ेगा कौन? 'कुत्ते ने आदमी को काटा' यह किसी अखबार का समाचार नहीं बनता लेकिन अगर 'आदमी ने कुत्ते को काटा' तो हर अखबार की सुर्खी बन जाएगा। 'नेता जी दिन भर स्वस्थ, चाक-चौबंद रहे' कोई समाचार नहीं है लेकिन 'नेता जी बीमार होकर अस्पताल पहुंचे' यह समाचार है। हमारे दिन की शुरुआत ही मस्तिष्क में नकारात्मक ऊर्जा भरने की प्रक्रिया के साथ होती है।

*१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला-१३४१०९

दिन में हम निन्दा-रस एकत्र करते हैं, टैक्स की चोरी करते हैं, तोल में हेराफेरी करते हैं, झूठ बोलते हैं, किसी का हक मारते हैं, किसी को पीड़ा पहुंचाते हैं इत्यादि। इससे भी हमें नकारात्मक ऊर्जा प्राप्त होती है।

शाम को हम टी. वी. देखते हैं या फिल्म देखते हैं। टी. वी. सीरियल्स या फिल्मों में भी हमको मारपीट, उठापटक, झूठ-फरेब, षड़यंत्र, धोखाधड़ी आदि ही दिखाई जाती है, जिससे हम नकारात्मक ऊर्जा अनायास ग्रहण करते हैं।

मस्तिष्क में सकारात्मक सोच भरें इसके लिए कोई उपक्रम हम नहीं करते। ईश-भजन, ईश-स्मरण, ईश-चर्चा, सद्साहित्य-अध्ययन, सतसंग-प्रवचन में हमारी रुचि नहीं है। इसके लिए हमारे पास समय नहीं है। परिणाम क्या होता है कि हमारा मस्तिष्क नकारात्मक ऊर्जा से शत-प्रतिशत भरा रहता है, जिसके कारण हमारी सोच नकारात्मक हो जाती है। हमें दुनिया भर की आशंकाएं घेरे रहती हैं। किसी पर हमें विश्वास नहीं रहता। हर जगह हमें धोखे की आशंका रहती है। एक अनजाना भय हमें अपनी गिरफ़्त में लिए रहता है।

यदि हम थोड़ी सकारात्मक ऊर्जा मस्तिष्क में डालेंगे तो वह नकारात्मक ऊर्जा को बाहर धकेलकर अपने लिए जगह बना लेगी। जितनी सकारात्मक ऊर्जा हम अपने मस्तिष्क में भरते जाएंगे उतनी ही नकारात्मक ऊर्जा वहां से निष्कासित होती चली जाएगी। जैसे-जैसे दिमाग

में सकारात्मक ऊर्जा का आवेग बढ़ेगा, हमारी आशंका, हमारे भय, हमारी दुष्चिंताएं निर्मूल होती चली जाएंगीं और हमारा चित्त शांत-स्थिर होता चला जाएगा।

आज हर आदमी परेशान है। उसके पास और सब कुछ है, लेकिन मन की शांति नहीं है। मन की शांति आएगी कहां से? मन तो तब शांत होगा जब हमारे मस्तिष्क में सकारात्मक ऊर्जा भरी होगी। नकारात्मक ऊर्जा तो अशांति ही देगी।

सोच नकारात्मक होगी तो स्वभाव भी नकारात्मक बनेगा। नकारात्मक स्वभाव निश्चय ही नकारात्मक व्यवहार को जन्म देगा। नकारात्मक स्वभाव एक सीमा पर आकर अपनों पर से ही नहीं, अपने पर से भी हमारा विश्वास हिला देता है। यहां तक कि हमें अपनी शक्ति, अपने सामर्थ्य पर भी संदेह होने लगता है। ऐसी स्थिति में हमारा व्यवहार सकारात्मक कैसे हो सकता है? सकारात्मक सोच होगी तो हम खुद भूखे रहकर भी किसी दीन-दुखी का पेट भरने की सोचेंगे, स्वयं नंगे रहकर भी किसी निर्धन-विपन्न आदमी का तन ढांपने की सोचेंगे, लेकिन यदि सोच नकारात्मक होगी तो हम भरे पेट होने पर भी किसी दूसरे के मुंह से कौर छीनने की सोचेंगे, उजले वस्त्र पहनकर भी चाहेंगे कि किसी दूसरे के तन का वस्त्र ही नहीं उसकी खाल तक उधेड़ लें। हमारा व्यवहार हमारी सोच पर निर्भर करता है। सोच सकारात्मक होगी तो किसी के प्रति दुर्भाव मन में आएगा ही नहीं। सोच नकारात्मक होगी तो कभी किसी का भला करने का विचार ही मन में नहीं आएगा।

सकारात्मक सोच हमसे जो भी कर्म कराती है उससे पुण्य-फल प्राप्त होता है। नकारात्मक सोच पाप में प्रवृत्त करती है। सकारात्मक सोच पैदा करने का सबसे आसान तरीका है कि हम उस निर्भय (प्रभु) का नाम जपें ताकि हमारे भय समाप्त हो जाएं। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है :

अखी परणै जे फिरां देखां सभु आकारु ॥
पुछा गिआनी पंडितां पुछा बेदु बीचार ॥
पुछा देवां माणसां जोध करहि अवतार ॥
सिध समाधी सभि सुणी जाइ देखां दरबारु ॥
अगै सचा सचि नाइ निरभउ भै विणु सारु ॥
होर कची मती कचु पिचु अंधिआ अंधु बीचारु ॥
नानक करमी बंदगी नदरि लंघाए पारि ॥

(पन्ना १२४१)





न्याय का सूरज

हमारे छठम गुरुदेव जब भए दयाला।
निर्माण कर दिया फिर तख्त अकाला।
अदल-ओ-इंसाफ की नींव थी डाली।
कोई मेहर-ओ-कर्म से रहे न खाली!
कोई निर्मम, निरंकुश न तख्त चलाये।
बिना धर्म-संहिता के न हुक्म सुनाये!
बेइंसाफी और अन्याय जड़ से जाये!
ज़ालिम मज़लूम का रक्त पी नहीं पाये!
सभी के लिए एके एक-एक ओअंकारा।
रोशन साच को नतमस्तक है नमस्कारा।
न्याय का सूरज गुरुदेव जी ने चढ़ाया।
न्याय का नूर सारे जग में फैलाया।

-डॉ सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर। मो ९४१७१-७५८४६



सुख की परिभाषा

*-बीबा मनप्रीत कौर**

इस संसार में सुखी व्यक्ति वही है जो कुछ भी नहीं है अर्थात् जो व्यक्ति अपने जीवन में सुख-दुख, मान-अपमान, निंदा-प्रशंसा को एक ही समझता हो, जिसे अपनी 'मैं' का त्याग करना आता हो। है तो यह एक कठिन कार्य क्योंकि *"तेरा जनु एकु आधु कोई ॥"* मगर जिस भी मनुष्य ने इस रहस्य को समझ लिया वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है, क्योंकि इस संसार में जिस भी व्यक्ति को थोड़ा-सा मान-सम्मान मिल जाता है वह उसके मद में झूमने लग जाता है और कहीं उसका कोई थोड़ा-सा अपमान कर दे तो वह गुस्से में आपा खो देता है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी 'मैं' को आगे ले जाना चाहता है। कोई एकाध व्यक्ति ही ऐसा होता है जो खुशी आने पर खुश और दुख आने पर दुखी नहीं होता।

हमारी जिंदगी न तो फूलों की सेज है और न ही कांटों से भरी है। खुशी और गम तो आते-जाते रहते हैं। अगर व्यक्ति के जीवन में केवल सुख ही हों तो वह रोगी बन जाता है। जीवन में आने वाली प्रत्येक मुश्किल हमें मजबूत बनाती है और हमारे शक्तिशाली विचार हमारी बड़ी से बड़ी मुश्किल को आसानी से दूर कर सकते हैं।

जिंदगी में हमें दुख तभी होता है जब हम किसी से कोई उम्मीद लगा लेते हैं। जो व्यक्ति आशा-निराशा का दामन छोड़ देता है, सांसारिक विषय-वस्तुओं का त्याग कर देता है, उसके हृदय में परमात्मा का निवास हो जाता है :

आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा ॥
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा ॥ *(पन्ना ६३३)*

हम अपने जीवन में वही काम करना चाहते हैं जिससे हमें सुख मिले। इसी भागदौड़ में ही सारा जीवन व्यर्थ में व्यतीत कर देते हैं और परमात्मा के नाम को भूल जाते हैं तथा खाली हाथ यहां से चले जाते हैं :

जब ही हंस तजी इह कांइआ प्रेत प्रेत करि भागी ॥ *(पन्ना ६३४)*

अपने भी हमारा साथ छोड़ देते हैं। वास्तव में सुख और दुख परमात्मा की माया है। जो इस माया को समझ लेते हैं वही मुक्ति को प्राप्त कर लेते हैं :

रज गुण तम गुण सत गुण कहीऐ इह तेरी सभ माइआ ॥
चउथे पद कउ जो नरु चीन्है तिन्ह ही परम पदु पाइआ ॥ *(पन्ना ११२३)*

ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि इसकी समझ भी परम पिता परमात्मा स्वयं देते हैं। वही सभी मनुष्यों के भीतर बैठे प्रेरित कर रहे हैं। प्रशंसा करने वालों में भी वही हैं, निंदा करने वालों के भीतर भी वही हैं। जो जीव परमात्मा की कृपा से इस भावना से ऊपर उठ जाते हैं वे पूर्ण आनंद की अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं :

—उसतति निंदा करे किआ कोई ॥
जां आपे वरतै एको सोई ॥ *(पन्ना ११२८)*
—अब जीअ जानि ऐसी बनि आई ॥
मिलउ गुपाल नीसानु बजाई ॥
उसतति निंदा करै नरु कोई ॥
नामे स्रीरंगु भेटल सोई ॥ *(पन्ना ११६४)*



**१६४-ए, शास्त्री नगर, माडल टाऊन, लुधियाना। फोन : ९८१४६-१११६४*

गुरसिखी बारीक है—३

-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ*

सिख रहित मर्यादा में समानता पर विशेष बल दिया गया है जो कि सिख धर्म-दर्शन का मूल आधार है। गुरुद्वारे में संगत के बीच बैठने में सिख-असिख, छूत-छात, जात-पात, ऊंच-नीच का कोई भ्रम या भेदभाव नहीं किया जाये। संगत में गद्दी, आसन, कुर्सी, चौंकी या मंजी लगाकर बैठने या अन्य किसी भेदभाव का भी निषेध किया गया है। संगत के बीच अथवा श्री गुरु ग्रंथ साहिब की उपस्थिति में नंगे सिर बैठना और सिख स्त्रियों का पर्दा अथवा घूंघट डाल कर बैठना भी वर्जित है। इन सबके पीछे एक पुष्ट आधार है संगत की महानता का। जब एक गुरसिख संगत की महानता को भली-भांति समझ ले तभी वह संगत की मर्यादा का पालन कर सकता है और संगत के प्रति मन में सच्ची श्रद्धा रख कर उपरोक्त रहितों को अपने आचरण में ढाल सकता है। गुरबाणी में स्थान-स्थान पर साधसंगत की महिमा का वर्णन किया गया है :

मेरे माधउ जी सतसंगति मिले सु तरिआ ॥
गुर परसादि परम पदु पाइआ सूके कासट हरिआ ॥ (पन्ना १०)

मनुष्य का उद्धार साधसंगत में ही है। तारनहार तो परमात्मा है। एक वही मनुष्य को भवजल से पार उतार सकता है। गुरबाणी जब संगत को मनुष्य का उद्धार करने वाला कहती है तो स्पष्टत: संगत में परमेश्वर का स्वरूप देखती है। इसीलिये कहा गया है कि जिसने साधसंगत की वह मोह-माया से मुक्त होकर मोक्ष पा सका और परमात्मा में लीन हो गया। साधसंगत मनुष्य को सुमार्ग पर डाल सकती है। इसीलिये यह रहित मर्यादा है कि गुरसिख गुरुद्वारे जाकर जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समक्ष माथा टेक ले तो साधसंगत के समक्ष भी सहज भाव से हाथ जोड़कर फतेह बुलाये। साधसंगत के दर्शन करते ही सारे संताप मिट जाते हैं :

गुर उपदेसि साध की संगति बिनसिओ सगल संतापु ॥
मित्र सत्र पेखि समतु बीचारिओ सगल संभाखन जापु ॥१॥
तपति बुझी सीतल आघाने सुनि अनहद बिसम भए बिसमाद ॥
अनदु भइआ नानक मनि साचा पूरन पूरे नाद ॥२॥ (पन्ना १२१७-१८)

साधसंगत में बैठकर परम आनंद की प्राप्ति होती है, मन में परमात्मा का नाम बस जाता है। परमात्मा सर्वशक्तिमान है किन्तु वह अपनी कृपा साधसंगत के माध्यम से ही करता है :

करण कारण समरथु है साधसंगति दा करै कराइआ।
भरै भंडार दातारु है साधसंगति दा देइ दिवाइआ।
पारब्रहम गुर रूपु होइ साधसंगति गुर सबदि समाइआ।
जग भोग जोग धिआनु करि पूजा परै न दरसनु पाइआ।

***E-1716**, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७ मो. ९४१५९-६०५३३

साधसंगति पिउ पुतु होइ दिता खाइ पैन्है पैन्हाइआ।
घरबारी होइ वरतिआ घरबारी सिख पैरी पाइआ।
माइआ विचि उदासु रखाइआ ॥ (वार ६:२)

भाई गुरदास जी परमात्मा-गुरु-शबद-संगत के रिश्ते को स्थापित करते हैं और उसकी व्याख्या करते हैं। परमात्मा गुरु के रूप में प्रकट हुआ है और शबद के रूप में संगत में समाया हुआ है। इस तरह संगत में परमात्मा का सिमरन हो रहा है और उस सिमरन में परमात्मा विद्यमान है। वह सिमरन गुरु द्वारा उच्चारित शबदों के गायन के द्वारा हो रहा है। इस तरह परमात्मा के व्यक्त रूप से संगत जुड़ी हुई है। इसीलिए सिख रहित मर्यादा में आगे कहा गया है कि संगत में गायन अर्थात् कीर्तन गुरबाणी का अथवा भाई गुरदास जी और भाई नंद लाल जी की बाणी का ही हो सकता है। भाई गुरदास जी और भाई नंद लाल जी की बाणी को गुरबाणी की व्याख्या के रूप में देखा जाता है। ये दोनों महापुरुष, सिख गुरु साहिबान के समकालीन थे और इनकी व्याख्या आधिकारिक व्याख्या के रूप में देखी जाती है और गुरबाणी के समतुल्य ही सम्मान दिया जाता है। शबद-गायन के लिये बनायी गयी एक रहित मर्यादा अति महत्वपूर्ण है कि शबद का मूल स्वरूप में ही गायन किया जाये तथा राग में पढ़ते हुए उनमें मनगढ़त और अतिरिक्त तुकें न लगायी जायें जिसका आजकल रुझान देखा जाता है। इससे बचना चाहिये और गुरबाणी के सही स्वरूप को कायम रखना चाहिये।

संगत की मर्यादा बनी रहे इसके लिये सिख रहित मर्यादा में कहा गया है कि संगत में एक वक्त पर एक ही बात होनी चाहिये, कीर्तन या कथा, व्याख्यान या पाठ। यदि गुरुद्वारे में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अखंड पाठ भी चल रहा है और वहीं कीर्तन भी हो रहा है, संगत में बैठ कर लोग गुटके (पोथी) से पाठ कर रहे हैं तो इससे एकाग्रता भंग होती है और कोई भी कार्य फलदायी नहीं होता है। संगत में बैठना तभी सार्थक है जब मन शांत और एकाग्र हो :

एकसु सिउ जा का मनु राता ॥
विसरी तिसै पराई ताता ॥१॥
बिनु गोबिंद न दीसै कोई ॥
करन करावन करता सोई ॥१॥रहाउ॥
मनहि कमावै मुखि हरि हरि बोलै ॥
सो जनु इत उत कतहि न डोलै ॥२॥
(पन्ना १८९)

सफल है वह अवस्था जब मन और मुख के मध्य सामंजस्य हो। रसना परामत्मा का सिमरन करे तो मन उस भाव को साथ-साथ ग्रहण करता चले। जो ऐसा करता है वह भाग्यशाली है :

हउ वारी जीउ वारी इकसु सिउ चितु लावणिआ ॥
गुरमती मनु इकतु घरि आइआ सचै रंगि रंगावणिआ ॥ (पन्ना ११२)

मन एक ही जगह टिके। जब एकाग्र चित्त लेकर आयें तो परमात्मा के रंग में स्वयं ही सराबोर हो जायेंगे। इस दृष्टि से यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिये कि जब संगत जुड़ी हो तो कोई ऐसा कार्य न किया जाये जिससे व्यवधान पैदा हो। गुरुद्वारे में पूरी शालीनता से जायें और मर्यादित भाव से श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आगे माथा टेक कर पूरी सहजता से संगत में बैठ जायें। किसी का भी आचरण ऐसा न हो जिससे सहजता और शांति भंग हो। शालीन और मर्यादित आचरण में अच्छी वेश-भूषा, सलीके सहित वार्तालाप, आत्म-प्रशंसा से परहेज तथा आत्म-प्रदर्शन न करने जैसी चीजें शामिल हैं। इन अवगुणों से बचने

के लिये और गुण प्राप्त करने के लिये गुरबाणी की शरण में जाना ही उचित है जो कदम-कदम पर हमें सद्व्यवहार को प्रेरित करती है :

अंम्रितु बोलै सदा मुखि वैणी ॥
अंम्रितु वेखै परखै सदा नैणी ॥
अंम्रित कथा कहै सदा दिनु राती अवरा आखि सुनावणिआ ॥२॥ (पन्ना ११८)

एक गुरसिख की बाणी में, दृष्टि में, कर्म में सदैव पवित्रता होनी चाहिए और उसे अन्य लोगों को भी अपनी पवित्रता से जोड़ना चाहिये। उसे परमात्मा के भय में विनम्रता से रहना चाहिये किन्तु परमात्मा के सिमरन में पूरी तरह कुशल होना चाहिये :

पहिला गुरमुखि जनमु लै भै विचि वरतै होइ इआणा।
गुरसिख लै गुरसिखु होइ भाइ भगति विचि खरा सिआणा।
गुरसिख सुणि मंनै समझि माणि महति विचि रहै निमाणा। (वार ३२:१)

संगत में बैठने योग्य बनने के लिये स्वयं परमात्मा के भय में जीने वाला अबोध, गुरु की शिक्षा पर चलकर परमात्मा का सिमरन करने वाला बुद्धिमान और गुरु के उपदेश मन में समझ-धारण करके पूरी तरह विनम्र होना होगा। जो ऐसा नहीं है वह किसी न किसी तरह संगत के एकचित्त होने में व्यवधान पैदा करता ही है।



बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी *(पृष्ठ १२ का शेष)*

कुल आयु और गुरगद्दी काल

आप जी ने कुल ७ साल ८ महीने २६ दिन की आयु व्यतीत की। इसमें से २ साल ५ महीने १९ दिन गुरगद्दी की जिम्मेवारी संभाली। सिख धर्म में आप सबसे छोटी आयु के गुरु थे।

उपदेश

आप जी ने संगत को 'सतिनाम वाहिगुरु' सिमरन का उपदेश दिया। गुरबाणी का पाठ करना, शुभ विचार ग्रहण करने और बुराइयों से दूर रहना सिखाया। आप जी ने वर्ण, जात-पात अदि भावनाओं को त्रिस्कारा और उपदेश दिया कि 'जाति' जन्म के साथ नहीं कर्म के साथ जुड़ी होती है। अच्छे कर्मों के साथ ही भ्रम-भय का विनाश होता है और अंतर-आत्मा में बल आता है।

विद्वानों के अनुसार अगर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के जीवन का अध्ययन करें तो यह सिद्ध होता है कि गुरु जी क्रांतिकारी समाज-सुधारक भी थे। उन्होंने नशा, तंबाकू तथा जुए के विरोध में, जो उस समय बहुत फैला हुआ था, लोगों को खड़े होने का उपदेश दिया। इसके अलावा कन्या को मारने वालों के साथ उन्होंने कोई सांझ नहीं रखी थी।

गुरु जी से सम्बंधित पावन स्थान

कीरतपुर साहिब गुरुद्वारा शीशमहल, जहां आप जी का जन्म हुआ। अंबाला के निकट गांव पंजोखरा में पंजोखरा साहिब। दिल्ली में वह कोठी जो राजा जय सिंह के बंगले के नाम से प्रसिद्ध थी अब गुरुद्वारा बंगला साहिब है। वहां गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब है जहां आप जी का अंतिम संसकार हुआ था।

सहायक पुस्तकें :

१. 'अष्ठम बलबीरा' -प्रिं सतिबीर सिंघ
२. 'सूरज प्रकाश ग्रंथ' -दस पातशाहीआं
३. 'गुरमति प्रकाश' -मई २००६



'सिंह' नहीं 'सिंघ' लिखो

*-प्रो सुरिंदर कौर**

सिख धर्म विश्व का सबसे आधुनिक धर्म है, जिसकी स्थापना केवल ५४० वर्ष पूर्व ही हुई है। अन्य धर्मों के प्रचार व प्रसार से कहीं आगे इतने अल्प समय में भी सिख धर्म आज विश्वव्यापी है। अपने आरंभ के काल से ही सिख धर्म को राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक विरोधों का सामना करना पड़ा, अनथक संघर्ष करना पड़ा, कई बार तो समूची कौम का आस्तित्व तक मिटाने के प्रयास किये गए, मगर सिखों ने अपने गुरु साहिबान के भरोसे असह पीड़ा सहन की, अकह प्रताड़नाएं झेलीं, घर-बार छोड़े, जंगलों में, बीहड़ों में, बियाबानों में दिन बिताए, बेशुमार शहादतें दीं, लेकिन धर्म को यशस्वी बनाए रखा। जितना संघर्ष सिख धर्म ने झेला, यदि किसी भी अन्य धर्म को झेलना पड़ता तो शायद वह संसार से मिट ही जाता। खास तौर पर अगर सिखों की तादाद/गिनती देखें तो यह एक करिश्मा ही लगता है। इतने आत्म-बल और सहन-शक्ति का प्रदर्शन मानव इतिहास के उत्सर्ग का द्योतक है, मानवीय सीमाओं की पराकाष्ठा है और यही सिख धर्म की विलक्षणता है। इसी विलक्षणता के आधार पर सिख धर्म विश्व में यह अनुपम इतिहास और एक अति विशिष्ट स्थान बना चुका है। सिख धर्म का गौरव और प्रतिष्ठा आज विश्व विख्यात है।

परंतु सिखों का संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है। पिछली तीन सदियों में सिख धर्म के अस्तित्व को कई चुनौतियां मिलीं और सिख उसका प्रबलता से सामना करते हुए अपनी विशिष्ट छवि व पंथक अस्तित्व को बचाने में सफल रहे। बीसवीं और इक्कीसवीं सदी में संघर्ष सशस्त्र न होकर बौधिक, साहित्यिक और अधिक जटिल हो गया है। कभी सिख धर्म को 'हिंदू धर्म का ही एक हिस्सा बताकर' तो कभी सिखों को 'आतंकवादी' कहकर उनकी छवि को गलत पेश किया जा रहा है। एक ओर सांस्कृतिक कार्यक्रमों के नाम पर 'लचर कल्चर' ने पंजाब के नौजवानों को तबाह कर दिया तो दूसरी ओर सिखी अर्थात सिख विरोधी ताकतों ने सिख इतिहास को तोड़-मरोड़कर अपने लाभानुसार प्रस्तुत किया। यहां तक कि सिख गुरु साहिबान तक को केवल हिंदू धर्म-रक्षक के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा और यह सिलसिला अब भी निरंतर जारी है।

ऐसा ही अस्तित्व मिटाने वाला प्रयास हिंदी साहित्य और साहित्यकारों द्वारा भी किया गया, जिसमें बड़ी आसानी से हमारे सिख साहित्यकार और अन्य भाषा के साहित्यकार भी फंस गए। हिन्दी में अक्सर सिख नामों को लिखते समय 'सिंघ' उपनाम के स्थान पर 'सिंह' का प्रयोग किया जाता है जो सर्वथा गलत है। 'सिंघ' उपनाम सिखों की विशिष्ट पहचान है। अन्य भाषाओं में 'सिंघ' शब्द के प्रयोग को लेकर कोई दिक्कत नहीं है, परंतु हिंदी में यह गलत परंपरा दशाब्दियों से चली आ रही है। मराठी भाषा भी

*R.No. 2, Banta Singh Chawl, Opp. Manish Park, Jijamata Marg, Pump House, Andheri (E), Mumbai-400093

देवनागरी में ही लिखी जाती है, मगर वहां 'सिंघ' अथवा 'सिंग' ही लिखा जाता है। अंग्रेजी में भी '**Singh**' ही लिखा जाता है '**Sinh**' नहीं। यह मामला धार्मिक संकीर्णता का नहीं है, सिख अस्तित्व का है।

'सिंघ' को 'सिंह' लिखने वाले यह तर्क देते हैं कि इससे शब्द के अर्थ में तो कोई फर्क नहीं पड़ता, परंतु ऐसे कई शब्द हैं जिनके उच्चारण-भेद से अर्थ में तो फर्क नहीं पड़ता पर व्यक्ति का अस्तित्व ही बदल जाता है। 'पाटिल' और 'पटेल' दोनों का अर्थ एक है—गांव का मुखिया, पर अब यदि भारत की माननीय राष्ट्रपति जी को 'प्रतिभा पाटिल' के स्थान पर 'प्रतिभा पटेल' लिख दिया जाए तो उपद्रव मच जाएगा, एक मराठी मूल का व्यक्ति गुजराती बन जाएगा, जबकि धर्म तो फिर भी हिंदू ही रहेगा। ऐसे ही भारत के प्रधानमंत्री को पूरा धर्म बदलकर 'मनमोहन सिंघ' के स्थान पर 'मनमोहन सिंह' लिखने में किसी को कोई आपत्ति नहीं होती, ऐसा क्यों?

हिंदी में 'सिंघ' को 'सिंह' लिखते-लिखते अब हालत यहां तक पहुंच गई है कि वे लोग नामों का भी अनुवाद करके लिखने लगे हैं, जैसे 'सुरिंदर' को 'सुरेंद्र', 'दविंदर' को 'देवेंद्र' तथा 'रजिंदर' को 'राजेंद्र' आदि। यहां तक कि अब गुरु साहिबान के नामों के साथ भी खिलवाड़ हो रहा है। 'गुरु गोबिंद सिंघ जी' के स्थान पर 'गोविंद सिंह' लिखा जा रहा है, जो सर्वथा अनुचित है, दुराग्रह है। आगे इस तथ्य के समर्थन में ठोस कारण भी हैं जिनकी यहां चर्चा करना अनिवार्य है :-

व्याकरणिक आधार

व्याकरण के अनुसार किसी भी व्यक्तिवाचक संज्ञा (विशेष नाम) का अनुवाद करते समय केवल लिप्यांतर किया जाता है अनुवाद नहीं। इस बात को एक आम अथवा औसत शिक्षण प्राप्त करने वाला भी जानता है, तो विद्वान श्रेणी क्यों नहीं? लिप्यांतर का अर्थ है अक्षरों का एक भाषा से दूसरी भाषा में परिवर्तन, समूचे विशेष नाम का अनुवाद किया ही नहीं जाता।

उदाहरण १ : यदि किसी अंग्रेज महिला का नाम है 'Rosy Smith', जो कि एक व्यक्तिवाचक संज्ञा है। अब यदि हिंदी में उनका नाम लिखना होगा तो केवल लिप्यांतर करके 'रोजी स्मिथ' लिखा जाएगा, न कि पूरा अनुवाद करके 'गुलाबो लोहार'। इससे तो उस महिला की पहचान ही बदल जाएगी।

उदाहरण २ : यदि किसी पठान का नाम 'फरजंद खान' अथवा 'फतेह खान' है तो हिंदी में भी वैसे ही लिखा जाएगा। उनका अनुवाद करके 'पुत्र खान' या 'विजय खान' नहीं लिखा जा सकता।

उदाहरण ३ : यदि किसी महिला का नाम 'कला जोशी' है तो उसे अंग्रेजी में लिखते समय केवल लिप्यांतर करके '**Kala Joshi**' ही लिखा जाएगा, अनुवाद करके '**Art Priest**' नहीं किया जाएगा।

इस प्रकार यदि नामों का अनुवाद किया जाने लगा तो किसी व्यक्ति की भी अपनी विशिष्ट पहचान नहीं रहेगी। व्याकरण की दृष्टि से भी यह गलत है। हिंदी के लेखक अपना नाम किसी भी भाषा में लिखें केवल लिप्यांतर करके सही नाम लिखते हैं, पूरा अनुवाद नहीं करते। कोई भी 'मैथिलीशरण गुप्त' को '**Maithili Refuge Secret**' या 'रामधारी सिंह दिनकर' को '**Ramholder Lion Sun**' नहीं लिखता, तो यह बात विचार करने को मजबूर करती है कि केवल सिखों के नामों (व्यक्तिवाचक संज्ञाओं) का ही हिंदी में अनुवाद क्यों किया जाता है और

किसकी आज्ञा से?

ऐतिहासिक कारण

भाषा की उत्पत्ति और विकास की प्रक्रिया में कई शब्द ऐसे हैं जो सहज ही विकसित हुए और विशेष बन गए। विशेष संज्ञाएं तो विशेष स्थान, प्रक्रिया अथवा व्यक्ति द्वारा ही प्रयोग में लाई जाती हैं।

'सिंघ' शब्द जो कि सिखों का अनिवार्य 'उपनाम' है किसी सहज प्रक्रिया अथवा कालावधि में उत्पन्न नहीं हुआ है। सन् १६९९ में खालसा-सृजन के साथ ही श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसे विशेष उपाधिस्वरूप सिख पुरुषों को प्रदान किया था। सबसे पहले पांच प्यारों के नामों के साथ 'सिंघ' लगा और छठे स्थान पर स्वयं गुरु साहिब जी ने अपने नाम को भी बदल कर 'गोबिंद सिंघ' बना लिया। यह शब्द उस समय भी 'सिंघ' ही था 'सिंह' नहीं। यह विशेष प्रक्रिया द्वारा विशेष नाम के रूप में सिख कौम को मिला है, अत: 'सिंघ' का अनुवाद नहीं किया जा सकता इसे यथावत ही लिखना है।

भाषाई साक्ष्य

'सिंह' शब्द संस्कृत का है, जो अपना स्वरूप बदलते-बदलते कई भाषाओं में विविध उच्चारणों के साथ बोला जाता है। इसका प्रकृत स्वरूप भी 'सिंह' ही है। हिंदी में भी यह 'सिंह' ही है, पर बंगाल और उड़ीसा में यह 'सिन्हा' बन गया। पंजाबी और अन्य उत्तरी भाषाओं में प्राकृत 'सिंह' का उच्चारण 'सिंघ' रूप में हुआ और फिर गुरमुखी में यह शब्द इसी स्वरूप में प्रयोग किया गया। यह अब पंजाबी का ही शब्द है। गुरबाणी उच्चारण के समय गुरु साहिबान ने भी इसी का प्रयोग किया है, जैसे श्री गुरु रामदास जी :

बकरी सिंघु इकतै थाइ राखे मन हरि जपि भ्रमु भउ दूरि कीजै ॥ *(पन्ना ७३५)*

श्री गुरु अरजन देव जी :

-पंच सिंघ राखे प्रभि मारि ॥
दस बिघिआड़ी लई निवारि ॥ *(पन्ना ८९९)*
-सिंघु बिलाई होइ गइओ त्रिणु मेरु दिखीता ॥ *(पन्ना ८०९)*
-गऊ चरि सिंघ पाछै पावै ॥ *(पन्ना १९८)*

यहां तक कि भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में 'सिंघ' शब्द का ही प्रयोग किया है। उनकी वारें पंजाबी और कबित्त बृज भाषा में रचे गए। हिंदी भाषी क्षेत्रों में उन्होंने कई वर्षों तक प्रचार किया। वे पंजाबी, हिंदी, बृज और उससे संबंधित सभी भाषाओं के ज्ञाता थे। फिर भी उन्होंने सोच-समझ कर शब्द 'सिंघ' का ही प्रयोग किया, जैसे :

-सिंघु बुके मिरगावली भंनी जाइ न धीरि धरोआ। *(वार १, पउड़ी २७)*
-बुकिआ सिंघ उजाड़ विचि सभि मिरगावलि भंनी जाई। *(वार १, पउड़ी ३४)*
-पहुता नगरि दुआरका सिंघ दुआरि खलोता जाए। *(वार १, पउड़ी ९)*
-चउथा करि नरसिंघ रूपु असुरु मारि प्रहिलादि उबारे। *(वार २३, पउड़ी १०)*

भक्त-बाणी जो श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का एक प्रमुख हिस्सा है, जिसे अपनी उदासियों के समय स्वयं श्री गुरु नानक देव जी ने एकत्रित किया था, जो बाणी जिस भाषाई स्वरूप में मिली उसे उसी स्वरूप में श्री गुरु अरजन देव जी ने दर्ज किया। भक्त-बाणी बहुत ही विस्तृत क्षेत्र और काल में रची गई, पर उसमें भी शब्द 'सिंघ' ही मिलता है 'सिंह' नहीं, जैसे:

भक्त कबीर जी :

बैठि सिंघु घरि पान लगावै घीस गलउरे लिआवै ॥ . . .

रूप कंनिआ सुंदरि बेधी ससै सिंघ गुन गाए ॥
(आसा ४७७)
देखत सिंघु चरावत गाई ॥ (आसा ४८१)

भक्त नामदेव जी :

सिंघच भोजनु जो नरु जानै ॥
ऐसे ही ठगदेउ बखानै ॥ (आसा ४८५)

भक्त सधना जी :

सिंघ सरन कत जाईऐ जउ जंबुकु ग्रासै ॥
(पन्ना ८५८)

यह स्पष्ट है कि मध्यकालीन हिंदी भाषाओं में भी शब्द 'सिंघ' ही प्रचलित और स्वीकृत था। जब हिंदी के लेखक उन रचनाओं का प्रमाणित संस्करण प्रस्तुत करते हैं तब तो 'सिंघ' को यथावत् रहने देते हैं पर केवल सिखों के नामों के साथ लगे 'सिंघ' का अनुवाद करके 'सिंह' बना देते हैं। साफ है कि यह विशेषत: सिख कौम के साथ दुराग्रही व्यवहार है, जिसे फौरन बदलने की जरूरत है।

सामाजिक कारण

राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल और अन्य पड़ोसी प्रदेशों में कुछेक जातियों के नाम के साथ 'सिंह' उपनाम का प्रयोग होता है, जिनमें से हरियाणवी, ठाकुर जाति, राजपूत आदि विशेष हैं। ये जातियां अपने नाम के बाद गोत्र लगाने से पूर्व 'सिंह' का प्रयोग करती हैं। सिख कौम में गोत्र का प्रयोग वर्जित है। यहां केवल उपनाम 'सिंघ' का ही प्रयोग अनिवार्य है। ऐसा दशमेश पिता ने जात-पात के भिन्न-भेद मिटाकर सामाजिक एकता लाने के लिए भी किया था। यह एक क्रांतिकारी सामाजिक आंदोलन था, जिसने जात-पात व्यवस्था के विरुद्ध समरसता और समानता को स्वीकारा। पूरी कौम में दो ही सांझे उपनाम हैं—पुरुषों के लिए 'सिंघ' और स्त्रियों के लिए 'कौर'। सिख संघर्ष काल में तो 'सिख' शब्द के स्थान पर 'सिंघ' और स्त्रियों के लिए 'सिंघणी' ही प्रचलित हुआ जो आज तक चल रहा है। यहां तक कि अरदास में भी शब्द *"जिन्हां सिंघां सिंघणीआं ने धरम हेत सीस दित्ते"* का ही प्रयोग है।

'सिंघ' शब्द सिख धर्म के अस्तित्व का प्रतीक है। अब यदि इस शब्द का अनुवाद करके 'सिंह' का प्रयोग सिख नामों के साथ किया जाता है तो सिख की पहचान ही भ्रमित हो जाती है। उदाहरण : यदि किसी स्थान पर पाठक यह लिखा पाते हैं कि "अजीत सिंह ने प्रथम स्थान प्राप्त किया है।" इस नाम से यह स्पष्ट नहीं होता कि यह व्यक्ति सिख है, राजपूत है, ठाकुर जाति का है या कोई और, पर यदि "अजीत सिंघ" लिखा हो तो साफ है कि व्यक्ति 'सिख' ही है। इसी प्रकार हिंदी के लेखक सिख (विशेष) नामों का अनुवाद कर व्यक्ति का धार्मिक अस्तित्व ही भ्रम में डाल देते हैं। 'सुरिंदर सिंघ' लिखने से स्पष्ट है कि व्यक्ति सिख है पर 'सुरेंद्र सिंह' लिखने से उसका अस्तित्व ही भ्रामक बन जाता है।

अत: हिंदी के लेखकों से और हिंदी में सिख नामों को लिखने वाले प्रत्येक व्यक्ति से यह निवेदन है कि दुराग्रह को छोड़कर, व्याकरण को समझ कर विशेष नामों का अनुवाद न करें। सिख नामों के साथ 'सिंघ' शब्द ही लिखें 'सिंह' नहीं। 'गुरमति ज्ञान' के संपादक सचमुच प्रशंसनीय हैं जो कि सही उपनाम 'सिंघ' का ही प्रयोग करते हैं। यह एक अभियान है जिसमें सभी का योगदान जरूरी है।

एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि हिंदी में नामों का अनुवाद करके लिखने से जनगणना के समय भी दिक्कत पेश आती है। बेशक पंजाब प्रांत में न हो, लेकिन अन्य प्रांतों में 'सिंघ' के

स्थान पर 'सिंह' लिखने से व्यक्ति को सिख न मानकर हिंदू ही मान लिया जाता है। कहीं-कहीं पर यह भ्रामक पहचान का नतीजा होता है, लेकिन ज्यादातर मामलों में जान-बूझकर ही सिख की पहचान 'सिंह' लिखकर भ्रमित की जाती है। यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव रहा है। जनगणना के समय अपना धर्म सिख लिखवाने के लिए मुझे उन अधिकारियों से खासी बहस करनी पड़ी थी।

यदि हिंदी लिखते समय 'सिंघ' का सही उपयोग हो, नामों का अनुवाद न होकर केवल लिप्यांतर किया जाए तो धार्मिक पहचान की समस्या अपने आप ही हल हो जाएगी। अतः प्रत्येक सिख से यह अनुरोध है कि अपना नाम हिंदी में लिखते समय 'सिंघ' का ही प्रयोग करें और दूसरों से भी अपना नाम इसी प्रकार लिखने को कहे, जिससे आज सिख के अस्तित्व को धूमिल करने वाले सफल न हो सकें।

इन बातों का खास ध्यान रखें

* प्रत्येक सिख पुरुष या महिला अपना नाम 'सिंघ' या 'कौर' के साथ पूरा लिखे।

* हिंदी में सिख का नाम लिखते समय 'सिंह' नहीं 'सिंघ' का प्रयोग करें।

* हिंदी में सिख का नाम लिखते समय 'सरदार' (स.) का प्रयोग करें।

* गुरु साहिबान के नामों के प्रति सजग रहें, 'गुरु गोविंद सिंह' नहीं 'गुरु गोबिंद सिंघ जी' लिखें। 



महिला

शीलवान हो, धैर्यवान हो तुम, ममता की मूरत हो।
गुरुओं को तुमने जन्म दिया, तुम जग उत्पत्ति की सूरत हो।
जब तक आदर रहा तुम्हारा, मेरा देश महान रहा।
शक्तिशाली, निरोग और पराक्रमी, वीरों की पहचान रहा।
मत भटको तुम अपनी राह से, तुम तो शक्तिमान हो।
गुरुओं के आदर्श हो तुम, ईश्वर का वरदान हो।
तुम माता हो, तुम पत्नी हो और तुम नारी महान हो।
दुश्मन को मजा चखाने को तुम तीखी तेज कृपाण हो।
घर को ऐसा जोड़ती हो तुम, नफरत का मुंह मोड़ती हो।
कड़ी हो तुम परिवार की ऐसी, कभी न नाता तोड़ती हो।
तेरे आगे झुके तकदीर, जब तूने सतित्व दिखाया।
तुझको भ्रमों के वश होकर, गया पुकारा माया।
तुम अपना अस्तित्व संभालो, विद्या के भूषण से सजा लो।
बच्चों को उपदेश दो ऐसा, शक्ति से सम्पन्न बना दो।
सत्य, अहिंसा, संतोष और तप, गुरुओं का आधार रहा,
जागो अब तुम इन कर्मों में, 'दुखी' असत्य कर्म भुला दो। 

-श्री सुरजीत दुखी, ३३२/९, गली जट्टां, अंदरून लाहौरी गेट, श्री अमृतसर।

कैसे पुन: स्थापित हो नारी का खोया सम्मान?

*-श्री हरिचंद स्नेही**

भारतवर्ष ऋषियों, मुनियों, संतों, महात्माओं और गुरुओं की पुण्य-भूमि है। सारा विश्व भारत की गाथाएं गाता है। इस वास्तविकता के पीछे नारी जाति का विशेष योगदान रहा है। सच तो यह है कि जहां नारी का सम्मान होता है वहां अनेक बरकतें स्वत: चली आती हैं।

यदि हम इतिहास का अवलोकन करें तो हमें ज्ञात होगा कि ऋषियों, मुनियों, संतों, महात्माओं, महान पुरुषों तथा प्रत्येक पुरुष की महानता और सफलता के पीछे नारी का ही हाथ रहा है। सतयुग में नारी की गौरवान्वित महिमा की एक झलक अवश्य मिलती है। त्रेता युग की बात करें तो नारियों की सबलता और साहस के कुछ अच्छे उदाहरण इतिहास दोहराता है। अब द्वापर युग पर दृष्टिपात करें तो हम अनुभव करेंगे कि नारी के पतन की कहानी महाभारत काल से ही आरंभ हो गई थी, जिसमें द्रोपदी के चीर हरण की घटना हर सीमा को पार कर गई। यह काल तो हमारे अपने ही शासन-काल का युग था। धीरे-धीरे नारियों पर अत्याचार बढ़ते गए और इन अत्याचारों के परिणामस्वरूप जहां नारियों का जीवन नरकमय बना वहीं परिवारों में भी दुख बढ़ते गए। इस देश पर अनेकों जातियों ने राज्य किया। मुगलकालीन भारत हो अथवा अंग्रेजों का युग रहा हो, नारियों के साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता रहा। इस प्रकार नारी जाति में एक असहनीय घुटन महसूस की जाती रही और धर्म के ठेकेदार अपनी स्वार्थसिद्धि करते रहे। वह अन्धकारमय युग भी आया जब धर्मान्धता के पूजक लोग पति के मरने के बाद पत्नी को जबरदस्ती सती करा दिया करते थे, ढोल-नगाड़ों की आकाश गुंजाने वाली ध्वनि के बीच उनकी चीत्कार और असहनीय तड़पन को चिता में भस्म होने के लिए मजबूर कर दिया करते थे। नारियों को घर के अंदर रहने पर बाध्य कर दिया गया। उनकी प्रत्येक सांस पर पुरुषों का अधिकार था। उन्हें पांव की जूती तक समझा जाने लगा। स्थिति यहां तक भी पहुंच गई कि ऐसा कहने की रीति ही बन गई : "ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी। ये सब ताड़न के अधिकारी।" किसी कवि की मन की तड़प ने उसे कहने पर मजबूर किया :

धरती की तरह हर दुख सह ले,
सूरज की तरह तू जलती जा।
सिन्दूर की लाज बचाने को,
चुपचाप तू आग पे चलती जा।

नारी**!** तुम तो ममता, प्रेम, वात्सल्य, हीरे, जवाहरात की खान हो, तुम तो अमृत का भंडार हो, किन्तु :

नारी जीवन तेरी यही है करुण कहानी,
आंचल में दूध और आंखों में पानी।

मातृशक्ति**!** तुम तो श्रद्धा की देवी हो। तुमने तो श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु तेग बहादर जी, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी, वीर बाल हककीत राय, महाराणा प्रताप, स. भगत सिंघ, राजगुरू, सुखदेव आदि अनेक महापुरुषों, वीरों की जननी हो। दूसरी ओर ऐसे पुरुषों की भी

*२१९०, सैक्टर-१२, पार्ट-१, सोनीपत (हरियाणा)-१३१००१, मो. ९४१६६-९३२९०

कोई कमी नहीं जिन्होंने तुम्हें पग-पग पर रौंदा और जो तेरी अस्मत की सौदेबाजी करते रहे। कवि को कहना पड़ा :

औरत ने जन्म दिया मर्दों को,
मर्दों ने उसे दुश्वार किया।
जब जी चाहा मसला, कुचला,
जब जी चाहा नीलाम किया।

हे नारी! तेरे दर्द, तेरी टीस को सर्वप्रथम समझा जगत-उद्धारक, समाज-सुधारक, नारी-उद्धारक श्री गुरु नानक देव जी ने। उन्होंने तुझे पुरुषों की दासता से मुक्त करने हेतु प्रथम प्रयास किया। नारी के सम्मान हेतु कन्या-वध तथा अल्पायु के विवाह का विरोध किया। श्री गुरु अमरदास जी ने इन प्रथाओं का जोरदार विरोध किया, नारी-शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया, विधवा विवाह को प्रोत्साहित किया। उनके सद्प्रयत्नों के फलस्वरूप नारियां सम्मान की पात्र बनीं। विश्व में नारियों को उच्च प्रतिष्ठित पदों पर आसीन होने का गौरव और सौभाग्य प्राप्त हुआ।

किन्तु आज, मन थर-थर कांपता है जब रेडियो, टी. वी., समाचार-पत्रों में नारी की हत्या विशेष रूप से भ्रूण-हत्याओं जैसी घृणित और अमानुषिक बातें सामने आती हैं। मानव दानव बनता जा रहा है। आज एक अन्य दुखदायक पक्ष व्याप्त है कि नारी स्वयं ही नारी जाति की दुश्मन बन रही है। जो घर कोमल नन्हीं बच्ची की किलकारियों से गूंजना चाहिये वहां गर्भ में ही बेदर्दी से उसे कत्ल करके जन्म लेने के अधिकार से भी वंचित किया जा रहा है और समय के ठेकेदार नारी और पुरुष उसका तमाशा देख रहे हैं :

जो बच्ची अपनी माता के, अभी गर्भ में आ पाई थी।
भ्रूण परीक्षण में भी उसको, कन्या ही तो दर्शायी थी।
वह जाने क्या-क्या बन जाती, पर उसका यह हाल हुआ था।
भ्रूण काल में ही बच्ची का, बेदर्दी से कत्ल हुआ था।

हमारा समाज बेबे नानकी जी, माता खीवी जी, बीबी भानी जी, माता नानकी जी, माता गुजरी जी, माता साहिब कौर जी, माता जीतो जी, भाई भागो जी और अनेक वीरांगनाओं को कैसे भूल सकता है जिन्होंने देश, कौम, धर्म के लिए कुर्बानियां दी हैं ताकि राष्ट्र जीवित रहे?

गर्भपात कराने से मानवता का समस्त विकास क्रम ही रुक जाता है। यह महापाप है जिसका कोई भी प्रायश्चित नहीं है। गर्भपात करने-कराने वाली स्त्रियों तथा पुरुषों पर प्रभु नाराज होते हैं।

कलयुगी माताएं और दादियां जो भ्रूण हत्या की इच्छुक हत्यारिन बनकर हस्पताल रूपी कत्लगाह में पहुंच कर कोमल कली को क्षत-विक्षत कर मरवा डालती हैं, वे चांडालिनी और राक्षसनी बन जाती हैं। वे उस समय यह नहीं सोच पातीं कि यदि तुम्हारा भी यही हाल किया होता तो क्या आज तुम्हारा अस्तित्व होता? इस कुकृत्य में हिंसा, व्यभिचार, दुराचार, पापाचार को पनाह मिल रही है।

कन्या को मारना, उसकी हत्या करना जीवन को अमंगल बनाना है। चिकित्सकों और महिला चिकित्सकों द्वारा चूषण पद्धति, फैलाव और निष्कासन विधि, डी एण्ड सी विधि तथा क्षार (नमक का घोल) पद्धति द्वारा गर्भपात किया जाता है जिसमें बच्ची तड़प-तड़प कर मर जाती है और गर्भ के अंदर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाते हैं। यह एक अमानवीय अत्याचार एवं अमानुषिक प्रक्रिया है। ऐसा करने वाले

डाक्टर भी समाज पर कलंक हैं।

नारी के गर्भ से जन्म लेने वाले स्त्री और पुरुषो! नारी के महत्व को जानो, समझो! गर्भस्थ शिशु (बच्ची) से लेकर वृद्धा नारी तक का सम्मान करके प्रभु की खुशियां प्राप्त करो। सौभाग्य हमारी चौखट पर आकर हमारा कदम चूमेगा। हम इन्हें पांव की जूती नहीं बल्कि सम्माननीय बनायें। नारी जाति के उत्थान, उद्धार करने वाले परम पिता परमात्मा से शुभाशीष प्राप्त करने के पात्र बन सकेंगे। तब नारी अबला नहीं बल्कि सबला बन जाएगी।

आओ, हम सभी मिलकर संकल्प करें कि नारी का सम्मान करेंगे। हम कन्या भ्रूण-हत्या नहीं करेंगे और न ही यह अमानुषिक कुकृत्य किसी अन्य को करने देंगे। दहेज रूपी दानवता से होने वाली हत्याओं और अन्धविश्वासों से नारी जाति के अपमान को रोकेंगे।



कविताएं

बिटिया

बिटिया पढ़-लिख कर क्या करेगी?
आखिर चौका-चूल्हा ही करेगी!
बेटी पराया धन है।
'गर यही हमारा चिंतन है,
या बेटी के लिए अपनापन है,
समझो हमारे विचारों में अनबन है।
बिटिया पर अन्याय अत्याचार है,
मानवता की हार है।
बिटिया से ऐसा विराग क्यूं? बेटे से राग क्यूं?
क्या बेटी को जन्म देने में,
जननी कम पीड़ा सहती है?
कि नौ माह कोख में नहीं ढोती?
अतः बिटिया को अभिशाप नहीं वरदान मानें!
उसकी भावना को पहचानें!
बिटिया ममता की खान है, हर युग में महान है।
बेटी घर का मान है, बेटी जग की शान है।
बेटी सृष्टि की आधारशिला है।
फिर क्यूं बिटिया से शिकवा-ग़िला है?
क्या बिटिया मां-बाप की चिन्ता नहीं हर सकती?
मुसीबतों से नहीं लड़ सकती?
या खुशियां नहीं ला सकती?
श्रम गीत नहीं गा सकती?
बिटिया नया सवेरा ला सकती है।
बिटिया देश के काम आ सकती है।
बस, बेटी-बेटे का भेद मिटाएं!
बिटिया को खूब पढ़ाएं!
उसे भी इंसान समझें,
बिटिया पर नेह के फूल बरसाएं।



-श्री काशीपुरी कुंदन, मातृछाया, मेला मैदान, राजिम, रायपुर (छ. ग.)-४९३८८५

स्नेह की सरिता

धर्म, जाति, भाषा के भेद मिटाएं।
सबको एकता, समता का पाठ पढ़ाएं।
मिलजुल कर रहें और स्नेह की सरिता बहाएं।
सबको स्नेह, सद्भाव की माला में पिरोएं।
सबमें नई आशा और विश्वास जगाएं।
समाज से भेदभाव, ऊंच-नीच, शोषण,
अन्याय, अनीति, अत्याचार मिटाएं।
सुख-शांति से रहें व दूसरों को रहने दें,
जिओ और जीने दो का पाठ पढ़ाएं।



-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)-४७०७७५

वृक्ष और मनुष्य

*-स. जसवंत सिंघ**

पुराने वक्त में बुजुर्ग बताते थे 'रुक्ख है तां मनुक्ख है'। कुछ समय पूर्व के वक्त में भी हमारे हरेक गांव के खेत में एक-दो वृक्ष अवश्य होते थे। खेतों के अतिरिक्त कीकर, बेरी, नीम, शीशम, शहतूत इत्यादि हरेक घर में होते थे, जिनके तले लोगों ने पशुओं को बांधना, स्वयं चारपाइयां लगाकर छाया का आनंद लेना। छोटी-मोटी वर्षा में भी वृक्ष का सहारा ले लिया जाता था। वृक्ष बेहिसाब रूप में काटने से ऑक्सीजन बहुत कम होती जा रही है। ऑक्सीजन कम होने से ऐसा वक्त चला आ रहा है कि हरेक यात्रा करने वाले को श्वास लेने के लिए अपने साथ अपना व्यक्तिगत सिलेंडर बांधना पड़ेगा। अत: हम गंभीर स्थिति को प्रतीत करें, ऐसा न हो कि हम वृक्षों का मलियामेट करके आने वाली पीढ़ियों को घोर संकट-स्थिति में डाल जायें। कहीं उनको सड़कों पर चलने के वक्त ऑक्सीजन सप्लाई ले जाने पर विवश न कर दें।

इन वृक्षों की लकड़ी बड़ी इमारतों में दरवाज़े-खिड़कियां आदि बनाने के काम आती है। विवाह-शादियों तथा मरने-परने के समय भी लकड़ी की बहुत आवश्यकता पड़ती है। कहीं ऐसा न हो कि हमारे जीवन में जगह-जगह बाधाएं उत्पन्न हो जाएं, इसलिए वृक्षों को आवश्यकतानुसार रखना अत्यंत जरूरी है। इनके बिना हमारा जीवन नहीं चल पायेगा।

वृक्ष कम हो जाने से जीव-जंतुओं और विशेषत: पक्षियों की कई प्रजातियां काफी कम होती जा रही हैं। विशेष तौर पर प्रात: हो जाने पर मनुष्यों को उठाने का, जगाने का काम चिड़ियों के जिम्मे होता था। पावन गुरबाणी का निर्मल कथन है:

चिड़ी चुहकी पहु फुटी वगनि बहुतु तरंग ॥
अचरज रूप संतन रचे नानक नामहि रंग ॥

(पन्ना ३१९)

चिड़ियों का चहचहाना प्रारंभ कर देने से ही मनुष्यों के लिए एक प्रकार का अलार्म हो जाता था कि दिन चढ़ गया है, अब सोना नहीं है! गांव जाने के समय आज वे दृश्य देखने को कम ही मिलते हैं, विशेषत: कौओं की डारें। यदि कौओं के एकत्रित होकर बोलने को पंजाबी भाषा में 'कावांरौली' कह कर निंदा करते हैं तो एक अच्छा पक्ष भी है कि यही कौआ जब मुंडेर पर बोलता है तो मेहमान के घर आने का संकेत मिलता है। इस कौए को चूरियां भी डाली जाती हैं :

उड उड कावां! तैनूं घिउ दी चूरी पावां,
एथे किते मेरा कंत आउंदा होवे!

पंजाब में धान की पराली, गेहूं की नरई का जलाना आज आम बात है। उसमें अनाज भी जलता है और जीवित जीव-जंतु भी, जो कि दुष्ट कर्म तुल्य है। इसके साथ यहां खड़े वृक्ष भी जल जाते हैं। उस वृक्ष पर फाख्ताओं, गटारों आदि के घोंसलों में उनके नन्हें बच्चे भी जल जाते हैं। जीवित जानवरों का यूं जल जाना रौंगटे खड़े कर देने वाला दर्दनाक दृश्य प्रस्तुत करता है। इससे वातावरण तो अत्यंत खराब होता ही है इसके साथ-साथ आग से जीव-जंतुओं को भी घुटन महसूस होती है। सुबह जब हम उठते हैं तो वस्त्रों पर राख़ पड़ी होती है। इस प्रचलन से हम कई रोगों का भी सामना कर रहे हैं। इस संबंध में कठोर कानून बनने चाहिएं। यह समय की जरूरत बन चुकी है, क्योंकि हम सांझे मानवी और राष्ट्रीय हित के बारे में बहुत कम सोचते हैं। इस दुनिया में मनुष्यों के साथ-साथ वृक्षों और पक्षियों का होना भी आवश्यक है जो कि वातावरण का समतोल बनाए रखने में सहायक होते हैं।



**मकान नं: २६०, नवीं आबादी, न्यू शहीद ऊधम सिंघ नगर, श्री अमृतसर।*

पुस्तक परिचय

पुस्तकें : श्री गुरू नानक प्रकाश (गुरमुखी लिपि में) पूरबार्द्ध भाग पहला और दूसरा
कृत कवि चूड़ामणि भाई संतोख सिंघ जी, संपादक : डॉ. किरपाल सिंघ
प्रकाशक : धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणि गु: प्र: कमेटी), श्री अमृतसर।
भाग पहला, पृष्ठ : ८८०, भेटा : १६५/-; भाग दूसरा, पृष्ठ : ८९१, भेटा : १६५/-

नूर दी सरां (तरनतारन) में जन्म लेने एवं परवरिश पाने वाले कवि भाई संतोख सिंघ द्वारा रचित, मनमोहक काव्य शैली में ब्रज भाषा में रचित दस गुरु साहिबान के जीवन-वृत्तांत, गुरु-कीर्ति को, विद्वानों में एवं सिख संगत में अधिकाधिक स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। यह गुरु-कीर्ति 'श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' कहलाती है। इसको १९८९ में भाषा विभाग, पंजाब की ओर से १४ जिल्दों में प्रकाशित करने का उद्यम किया गया। अर्थों और फुट नोटों सहित होने पर भी इस महान व गहरे भावों वाले ग्रंथ को उचित प्रकार से समझ सकने में अधिकतर पाठकों को पेश आने वाली कठिनाई को सम्मुख रखते हुए, इसके समाधान के तौर पर इसके पूरे-पूरे अर्थ करके इसको पुन: प्रकाशित करने की आवश्यकता प्रतीत की जा रही थी। इस आवश्यकता की पूर्ति के सम्मुख धर्म प्रचार कमेटी (शि: गु: प्र: कमेटी), श्री अमृतसर ने जाने-माने विद्वान डॉ. किरपाल सिंघ की अगुआई में तीन अन्य विद्वानों—डॉ. गुरचरन सिंघ साकी, स. सुखमिंदर सिंघ गज्जणवाला और स. मनजीत सिंघ की टीम सहयोगियों के रूप में बना कर इसको प्रकाशित करने का उद्यम प्रारंभ किया है।

उपरोक्त दोनों पुस्तकें 'श्री गुरू नानक प्रकाश (भाग पहला और भाग दूसरा)' इस बड़े और महान कार्य की प्रारंभिक किश्त हैं। इसलिए कि इन दोनों पुस्तकों के संपादक डॉ. किरपाल सिंघ एक प्रबुद्ध एवं प्रवीण इतिहासकार के रूप में अपनी पहचान पहले ही स्थापित कर चुके हैं। अत: उन्होंने इसके अर्थ करने-कराने के कार्य को पूरा करने के साथ-साथ एक इतिहासकार की दृष्टि से चूड़ामणि कवि जी द्वारा जन्म-साखियों, विशेषत: भाई बाले वाली जन्म-साखी, हिंदू मिथिहास, जैसे कि पौराणिक कथा साहित्य की पुनर्काव्य व्याख्या के संबंध में आवश्यक टिप्पणियां अंकित करके, पाठकों की कुछ एक संभावी शंकाओं एवं उनके भ्रमों का समाधान करने का यत्न भी किया है। इन संपादित पुस्तकों में से इनके संपादकीय मंडल की गुरमति विचारधारा संबंधी सूझ-बूझ प्रतिबिंबित होती देखी जा सकती है। लागत से भी कम दाम पर धर्म प्रचार कमेटी ने यह बहुत बड़ा खजाना, इसके संभावी पाठकों को उपलब्ध कराने का एक निष्काम प्रचार-कार्य किया है। गुरमति जीवन-दृष्टि के के अनुआई कथाकारों तथा व्याख्यानकारों के साथ-साथ गुरमति साहित्य के सजग पाठकों के लिए ये दोनों पुस्तकें एक सीमित भेटा के साथ एक बहुत बड़ी साहित्यक निधि सिद्ध होंगी।

परिचयकार : सुरिंदर सिंघ निमाणा
सहायक संपादक, गुरमति ज्ञान।

गुरबाणी चिंतनधारा : ३४

त्व प्रसादि सवैये पातशाही १०

*-डॉ मनजीत कौर**

बीर अपार बडे बरिआर अबिचारहि सार की धार भछय्या ॥
तोरत देस मलिंद मवासन माते गजान के मान कलय्या ॥
गाढ़े गढ़ान को तोड़नहार सु बातन हीं चक चार लवय्या ॥
साहिबु श्री सभ को सिरनाइक जाचक अनेक सु एक दिवय्या ॥६॥

प्रस्तुत सवैये में गुरु कलगीधर पातशाह बहुत ही बलशाली योद्धाओं का जिक्र करते हैं जो अत्यन्त शक्तिशाली बागियों को भी परास्त करने की क्षमता रखते हैं, विशाल किलों को भी ध्वस्त कर देने में समर्थ हैं, परन्तु यह ख्याल रहे कि ईश्वर के दर पर उनकी हैसियत एक भिखारी से अधिक नहीं है (जो नाम से रहित है)।

गुरदेव फरमान करते हैं कि दुनिया में अत्यधिक शूरवीर योद्धा हैं, जो बिना किसी परवाह के (बिझिझक) शस्त्रों के वार (चोट) बर्दाश्त करते हैं, जो बलशाली वीर अनेक देशों पर विजय पा लेते हैं, बागियों (आकियों) को भी जो अपने अधीन कर लेते हैं अर्थात् गुलाम बना लेते हैं और उनके अभिमान को चकनाचूर कर देते हैं तथा मदमस्त हाकिमों का अभिमान भी तोड़ देते हैं। जिनका मजबूत किलों को तहस-नहस करके जीत प्राप्त कर लेना, केवल कोरी बातों से ही अर्थात् खोखली धमकियों से ही सारी पृथ्वी पर अधिकार कर लेना अर्थात् सारी धरती पर कब्जा जमा लेना जिनके बायें हाथ का खेल हो, ऐसे अनेक व्यक्ति उस वाहिगुरु के दर पर भिखारी ही हैं। वो मायापति अर्थात् अकाल पुरख ही सबका मालिक है और सबको दातें बख्शने वाला है।

वस्तुत: जगत में कोई कितना ही ताकतवर क्यों न हो, बेपरवाह होकर शस्त्रों की चोटें सहन् करने की शक्ति रखता हो, चाहे वो कितने ही विशाल मजबूत किलों को मलियामेट करने की क्षमता रखता हो, इन शक्तियों को आखिर वो मांगता तो उसी सर्वशक्तिशाली भगवान से ही है न। उसके दर पर तो वो भी भिखारी ही है। गुरबाणी आशयानुसार जो जीवन बिताते हैं, जिनके हृदय में यह ख्याल हर वक्त बना रहता है कि सब कुछ उसके अधीन है, जैसे हाथी के सिर पर महावत का कुंडा है, वह उसी के इशारे पर ही चलता है, वैसे ही अगर जीव अभिमान रहित होकर ईश्वर की सेवा भक्ति करता है तो उस पर उस प्रभु की रहमतें बरसती हैं। गुरबाणी का प्रमाण है :

हसती सिरि जिउ अंकसु है अहरणि जिउ सिरु देइ ॥
मनु तनु आगै राखि कै ऊभी सेव करेइ ॥
इउ गुरमुखि आपु निवारीऐ सभु राजु स्रिसटि का लेइ ॥ (पन्ना ६४७)

दानव देव फनिंद निसाचर भूत भविख भवान जपैंगे ॥
जीव जिते जल मै थल मै पल ही पल मै सभ थाप थपैंगे ॥

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)-३०२००४ फोन : ०१४१-२६५०३७०

पुंन प्रतापन बाढ जैत धुन पापन के बहु पुंज खपैंगे ॥
साध समूह प्रसंन फिरै जग सत्र सभै अवलोक चपैंगे ॥७॥

प्रस्तुत सवैये में गुरु पातशाह ने देवताओं, दानवों, भूतों-प्रेतों सबको ही उस सर्वसमर्थ ईश्वर की अराधना करते हुए बताया है।

गुरदेव का पावन फरमान है कि दानव (राक्षस), देवता, शेषनाग तथा रात्रि में विचरण करने वाले (भूत-प्रेत) आदि भूतकाल (बीते हुए समय में), वर्तमान (जो चल रहा है) और भविष्य काल (आने वाले समय) में भी उस अकाल पुरख की आराधना करते आए हैं, कर रहे हैं तथा करते रहेंगे अर्थात् हर युग में उसी की पूजा हो रही है। हर जीव अपने-अपने ढंग से भजन-बंदगी कर रहा है।

जल में, थल पर जितने भी जीव मौजूद हैं, प्रभु द्वारा मिली सूझ-बूझ अर्थात् जितनी उसने भक्ति करने की शक्ति बख्शी है उतनी ही उसकी बंदगी कर रहे हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि सब कुछ उस परमेश्वर के हुक्म में ही हो रहा है।

जल में और थल पर जितने भी जीव हैं उनकी रचना वह प्रभु एक पल में ही कर देता है। प्रभु के सिमरन से शुभ कर्मों का तेज प्रताप बढ़ता है और उसके फलस्वरूप मिली जीत के जयघोष होते हैं अर्थात् जय-जयकार होती है तथा जीव के अनेक पाप (पल में) नाश हो जाते हैं।

प्रभु की बंदगी (भक्ति) करने वाले जीव दुनिया में सदैव प्रसन्नचित्त रहते हैं। उनके तेज प्रताप के समक्ष दुष्ट भयभीत हो जाते हैं। उनके ऐसे चढ़दी कला वाले जीवन को देख कर विरोधियों की विरोधता स्वत: ही नष्ट हो जाती है।

उस परमेश्वर पर अपार श्रद्धा रखते हुए गुरु कलगीधर पातशाह ने सर्वकला समर्थ प्रभु के समक्ष विनती की है, जैसे कि उनकी बाणी चौपई साहिब में परमेश्वर के चरणों में अरदास विनती की है, यथा :

तुमहि छाडि कोई अवर न धियाऊं ॥
जो बर चहों सु तुम ते पाऊं ॥
सेवक सिक्ख हमारे तारीअहि ॥
चुनि चुनि सत्र हमारे मारीअहि ॥४॥

उपरोक्त सवैये में गुरदेव कलयुगी जीवों का दिशा-निर्देश करते हैं कि जो भी व्यक्ति सृष्टि के रचियता प्रभु का सिमरन करते हैं उनकी शोभा (उपमा) होती है, वे आनंद में रहते हैं।

मानव इंद्र गजिंद्र नराधप जौन त्रिलोक को राज करैंगे ॥
कोटि इसनान गजादिक दान अनेक सुअंबर साज बरैंगे ॥
ब्रहम महेसर बिसन सचीपति अंत फसे जम फास परैंगे ॥
जे नर श्री पति के प्रस हैं पग ते नर फेर न देह धरैंगे ॥८॥

उपरोक्त सवैये में गुरु कलगीधर पातशाह दुनियावी अनंत उपलब्धियों को भी तुच्छ मानते हैं, यहां तक कि देवत्व की प्राप्ति के सुख और ऐश्वर्य प्रभु-चरणों की प्रीति के बिना नश्वर (क्षगभंगुर) हैं।

गुरु पातशाह का पावन फरमान है कि जो लोग बड़े-बड़े एरावत हाथियों के स्वामी होकर चक्रवर्ती सम्राट बनते हैं तथा तीनों लोकों (मात लोक, पाताल लोक, आकाश लोक) पर राज्य करते हैं अर्थात् तीनों भवनों के स्वामी हैं; (ऐसे प्रतापी राजा) जो अनेकों तीर्थों पर स्नान करते हैं तथा अनेकों हाथियों का दान करते हैं, (यही

नहीं) अनेक प्रकार के स्वयंबर रचा कर विवाह करते हैं अर्थात् अनेक तरह की शर्तों पर स्वयंबर रचते हैं, (केवल प्रतापी नरेश ही क्या?) ब्रह्मा, शिवजी, विष्णु सचीपति (सची नाम की अप्सरा का पति अर्थात् इन्द्रदेव), ये सब भी मोह-माया से ग्रसित हुए अंत में काल-ग्रस्त होंगे।

जो भाग्यशाली मनुष्य भगवान के चरणों में समर्पित हैं वे फिर आवागमन में नहीं पड़ेंगे, उन्हें फिर शरीर धारण नहीं करना पड़ेगा (क्योंकि जहां जन्म है वहां मृत्यु भी अवश्य होगी)। इसलिए ऐसे जीव जो ईश्वर की बंदगी करते हैं वे आवागमन से पूर्णतया मुक्त हो जाते हैं।

कहा भयो जो दोऊ लोचन मूंद कै बैठि रहिओ बक धिआन लगाइओ ॥
न्हात फिरिओ लीए सात समुद्रनि लोक गयो परलोक गवाइओ ॥
बास कीओ बिखिआन सो बैठ कै ऐसे ही ऐसे सु बैस बिताइओ ॥
साच कहों सुन लेहु सभै जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ ॥९॥

प्रस्तुत सवैये में गुरु पातशाह दुनिया के लोगों को सुचेत करते हुए स्पष्ट करते हैं कि चाहे बाहरी तौर पर जितने भी प्रयोजन किये जाएं उससे जीव का कुछ भी संवरने वाला नहीं है, क्योंकि रूहानी प्रेम के बिना प्रभु को पाया नहीं जा सकता और बिना प्रभु-प्राप्ति के यह जीवन व्यर्थ ही चला जायेगा।

गुरु कलगीधर पातशाह का पावन फरमान है कि अगर कोई मनुष्य दोनों आंखें मूंद कर, बगुले की तरह समाधि लगाकर बैठा रहे इससे कोई लाभ प्राप्त होने वाला नहीं है। अगर कोई मनुष्य सात समुद्रों (सारी पृथ्वी) अथवा समस्त तीर्थों पर स्नान करता फिरे तो भी कोई लाभ नहीं। उसने अपना यह लोक तथा परलोक दोनों ही गंवा लिये, क्योंकि प्रभु के सिमरन के बिना तीर्थों पर स्नान करने से भी मुक्ति नहीं मिलती।

गुरदेव समूची दुनिया के लोगों को सम्बोधित करते हुए उपदेश देते हैं कि हे बंधुओ! सुनो! मैं सच कहता हूं कि जिस किसी ने भी विषय-विकारों तथा व्यर्थ के आडंबरों को छोड़ कर प्रभु से प्रेम किया है उसी ने प्रभु को पाया है।

गुरदेव ने स्पष्ट कर दिया कि न तो किसी बाहरी साधना से, श्रद्धाविहीन कर्मकांडों से प्रभु मिलता है और न ही विषय-विकारों में गलतान हुए रहना मानव जीवन का मनोरथ है। अपनी सही जीवन-राह से भटका हुआ व्यक्ति अपना लोक तथा परलोक दोनों ही गंवा लेता है, क्योंकि ईश्वर की प्राप्ति तो उसे ही होती है जिसने ईश्वर तथा ईश्वर की रचना खालक और खलकत दोनों से ही प्यार किया है।

इस सन्दर्भ में अंग्रेजी की एक कविता याद आती है जिसमें यही भाव स्पष्ट होता है कि जो ईश्वर के बंदों से प्यार करता है वही ईश्वर को प्यारा लगता है। कविता में एक कथा का वृत्तांत अंकित है कि अबू बिन आदम नाम का एक व्यक्ति मानवता-प्रेमी एक रात अपने शयनकक्ष में एक रोशनी देखता है, जिसमें एक फरिश्ता अपने हाथ में एक कागज तथा कलम लिए हुए कुछ लिख रहा होता है। अबू बिन आदम ने उस फरिश्ते से पूछा कि "तुम क्या लिख रहे हो?" जवाब मिला कि "मैं ईश्वर से प्यार करने वालों की सूची बना रहा हूं। ईश्वर ने मुझे यह कर्त्तव्य सौंपा है।" अबू बिन आदम ने पूछा कि "क्या इसमें मेरा नाम है?" फरिश्ते ने कहा, "नहीं।" साथ ही सवाल किया, "क्या तुम ईश्वर से प्रेम करते हो?" अबू बिन आदम

ने जवाब दिया, "ईश्वर को तो मैंने अभी देखा नहीं पर हां, मैं ईश्वर के बंदों से बहुत प्यार करता हूं।" इतना सुनकर फरिश्ता अदृश्य हो गया।

अगली रात अब अबू बिन आदम ने अपने कमरे में फिर वही प्रकाश देखा। आज फरिश्ते के हाथ में एक बहुत लंबी सूची थी, जिसमें अबू बिन आदम का नाम सबसे ऊपर अंकित था। अबू बिन आदम यह देख कर हैरान हुआ। फरिश्ते ने मुस्कराते हुए कहा, "जो ईश्वर के बंदों से प्यार करता है वही वास्तव में ईश्वर से प्यार करता है।"

वस्तुत: ईश्वर ही प्रेम है और प्रेम ही ईश्वर है। जो उस परमेश्वर के जीवों से प्यार करता है वही ईश्वर से प्यार करता है, जैसा कि गुरबाणी का प्रमाण है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ *(पन्ना १३४९)*

यही नहीं आध्यात्मिक क्षेत्र में अकाल पुरख की प्राप्ति का प्रमुख आधार ही प्रेम है। ईश्वर स्वयं ही प्रेम है तथा प्रेम ही जीवों के पालन-पोषण तथा गले से लगाने का आधार है, यथा :

सारि समालै निति प्रतिपालै प्रेम सहित गलि लावै ॥
कहु नानक प्रभ तुमरे बिसरत जगत जीवनु कैसे पावै ॥ *(पन्ना ६१७)*

काहू लै पाहन पूज धरयो सिर काहू लै लिंग गरे लटकाइओ ॥
काहू लखिओ हरि अवाची दिसा महि काहू पछाह को सीसु निवाइओ ॥
कोऊ बुतान को पूजत है पसु कोऊ म्रितान को पूजन धाइओ ॥
कूर क्रिआ उरझिओ सभ ही जग श्री भगवान को भेदु न पाइओ ॥१०॥

इस बाणी के अंतिम सवैये में गुरु कलगीधर पातशाह पत्थर-पूजा, कब्रों आदि को पूजना, विशेष दिशा में ही प्रभु को मानने की प्रवृत्ति, समस्त झूठे रिवाजों में उलझे जीवों को उस परमेश्वर से जोड़ कर जीवन सफल करने की युक्ति समझा रहे हैं।

गुरु पातशाह का पावन फरमान है कि अगर किसी ने पत्थर को ही पूजनीय ठाकुर समझकर उसी की उपासना शुरू कर दी अर्थात् मूर्ति का पुजारी बन गया और किसी ने शिवलिंग को गले में लटका लिया। किसी ने प्रभु को दक्षिण दिशा में बसता समझा, तो किसी ने उसे पश्चिम दिशा में जान कर प्रणाम किया। कोई पशु प्रवृत्ति वाला अर्थात् मूढ़ मनुष्य बुतों की पूजा करता रहा और कोई कब्रिस्तान में जाकर कब्रों को ही पूजता रहा।

सारा जगत व्यर्थ के कर्मों में उलझा पड़ा है। सर्व उपमायोग परमेश्वर के मिलाप का किसी ने भी भेद नहीं पाया। ईश्वर का भेद तो आज तक कोई नहीं पा सका और न ही गुरबाणी आशयानुसार परमेश्वर का भेद पाना किसी जीव का मनोरथ है। उसकी व्यापकता का बोध भी जीव को आज तक नहीं हो सका है।

श्री गुरु नानक देव जी ने काजी से कहा था—"जिधर तेरा काबा नहीं, उधर मेरे पैर कर दे।"

अर्थात् ईश्वर हर दिशा में, हर कण में विराजमान है। बस, यह भेद गुरु-कृपा से जिसने पा लिया उसका ही जीवन सफल है, धन्य है। बाकी सब तो झूठे रीति-रिवाजों में, कर्मकांडों में उलझ कर अपना जीवन नष्ट कर रहे हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पावन बाणी में

गृहस्थ जीवन का नया दार्शनिक संकल्प देकर उसके महत्व को बहुत ही सरल और सहज ढंग से समझाया है तथा धार्मिक नवचेतना का संचार करते हुए व्यर्थ के आडम्बरों तथा फोकट कर्मों को त्यागने को प्रेरित किया है। एक बहुत ही सुंदर उदाहरण गुरु कलगीधर पातशाह की उपरोक्त बाणी का निष्कर्ष प्रस्तुत करता है, यथा :

नगन फिरत जौ पाईऐ जोगु ॥
बन का मिरगु मुकति सभु होगु ॥
किआ नागे किआ बाधे चाम ॥
जब नही चीनसि आतम राम ॥१॥रहाउ॥
मूड मुंडाए जौ सिधि पाई ॥
मुकती भेड न गईआ काई ॥२॥
बिंदु राखि जौ तरीऐ भाई ॥
खुसरै किउ न परम गति पाई ॥३॥ (पन्ना ३२४)

अतः गुरबाणी आशयानुसार जीव को केवल एक अकाल पुरख, जो सर्वशक्तिमान है, का सिमरन करना है।

गुरदेव ने इस बाणी में उस परमेश्वर को ही सर्वगुण-सम्पन्न, सर्वकला-समर्थ बताते हुए सदैव जीव को उसी की आराधना करने को प्रेरित किया है तथा स्पष्ट किया है कि जिस भी मनुष्य ने एकाग्रचित होकर प्रभु को एक पल भी याद किया है वह पूर्णतया आवागमन से मुक्त हो गया है। वस्तुतः जिस पर भी उस अकाल पुरख की रहमत होती है उसे ही सिमरन की दात प्राप्त होती है, उसी का हृदय प्रेम से परिपूर्ण होता है।

आओ! वाहिगुरु के चरणों में अरदास करें कि हे परवरदिगार! रहमत करो, कोई किनका प्यार का हमारी भी झोली में डाल दो जिस सदका हमारा लोक-परलोक सफल हो जाए।



कविता

प्रकृति का नियम यही है

जितनी भी चिड़िया उड़े आकाश,
दाना है धरती के पास।
दाने की भी अजब कहानी,
जब तक नहीं मिल जाता खाक,
तब तक बनती नहीं है बात।
जब तक मिट्टी में गर्क न होगा,
तब तक अंकुरित कैसे होगा?
कैसे बनेगा फिर वृक्ष विशाल?
कैसे फूल, फल, छाया देगा?
बंदे की भी यही कहानी,
जब तक रहता है अभिमानी।
चाहे जितनी दौलत पाये,
रत्न सौदागर भी कहलाये।
सुंदर बंगले, ए सी. गाड़ियां,
गज-अश्वों की सवारियां।
तन को तो अवश्य सुख देंगी,
कौन-सा ए सी. मन को सुख देगा?
किस मोती से मन को जड़ेगा?
अगर जीवन में सुख चाहे,
जीवन 'दाने' जैसा बना ले।
अहंकार छोड़ 'मैं' को मिटा दे,
मन को गुरु-चरणों में लगा दे।
बुजुर्गों का कथन सही है,
प्रकृति का नियम यही है,
कि दाना खाक में मिलकर,
गुले-गुलजार होता है।
बंदा विनम्रता से ही,
भवसागर से पार होता है।



गुरु-गाथा : १२

मैं तेरा बंदा

*-डॉ अमृत कौर**

दक्षिण में नांदेड़ के समीप गोदावरी नदी के किनारे एक रमणीय स्थान पर वैरागी माधो दास का आश्रम था। सुंदर उपवन और वृक्षों से घिरी वैरागी की कुटिया में हाथी दांत से निर्मित पावों वाली एक सुंदर सेज से सुसज्जित शानदार पलंग बिछा हुआ था। इस सुंदर रमणीय उपवन में वैरागी के अनेक शिष्य रहते थे। आश्रम के लोग भोजन तैयार कर अपने स्वामी की प्रतीक्षा कर रहे थे। इतने में घोड़ों की टापों की आवाज सुनाई दी। पल भर में एक बलवान तेजस्वी महापुरुष घोड़े पर सवार आते दिखाई दिए। पांच-सात शूरवीर योद्धा उनके साथ थे। उन सब ने एकाएक आश्रम में प्रवेश किया। आश्रम के लोग सहम गए। उनका तेज और दबदबा कुछ ऐसा था कि आश्रम के लोग आश्चर्यचकित हो उन्हें देखते ही रह गए। उनके सिर अदब से झुक गए।

महाबली तेजस्वी पुरुष श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने साधुओं से पूछा, "तुम्हारे आचार्य कहां हैं?" उनका उत्तर था, "कहीं वन में समाधि लगाए बैठे होंगे।" महाबली ने कहा, "हम तुम्हारे आश्रम आए हैं। जोरों से भूख लगी है। भोजन छकाओ!" आश्रम के लोगों का उत्तर था, "जब तक स्वामी जी आकर भोजन ग्रहण नहीं कर लेते, हम आपको भोजन नहीं छका सकते।" गुरु जी ने कहा, "हम आपके स्वामी से ही मिलने आए हैं। हमें भूख लगी है। आप हमें शीघ्र भोजन छकाने का कष्ट करें।" आश्रम के लोगों का उत्तर था, "भूखे अतिथि को भोजन छकाना तो हमारा धर्म है, मगर हम आपको स्वामी जी से पहले भोजन में स्वतंत्र नहीं हैं। हम उनके हुक्म के गुलाम हैं।"

महाबली श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने योद्धाओं को परशादा तैयार करने का आदेश दिया। वे कुटिया में बिछे पलंग पर बैठ गए। बाकी के साथी बाग में जाकर कुछ फल तोड़ लाए। देखते ही देखते परशादा तैयार हो गया। सुंदर उपवन में बैठकर गुरु जी ने अपने साथियों के साथ परशादा छका।

अपने स्वामी के पलंग पर एक अजनबी को विश्राम करते देख माधोदास वैरागी के शिष्य सहन न कर पाए। कुछ व्यक्ति वन में भागे गए और माधोदास वैरागी को ढूंढ कर सम्पूर्ण गाथा सुनाई। माधोदास सुन कर आग-बबूला हो गया और आकाश की ओर देख कर अपनी तांत्रिक विद्या के द्वारा पलंग से महाबली गुरु जी को गिराने का प्रयास करने लगा, मगर अपनी तमाम कोशिशें करने के बावजूद भी वह असफल रहा।

वह क्रोध में आकर बोला कि "जो भी मेरे आश्रम में आकर मेरे पलंग पर बैठा है मैं उसे अभी जाकर देख लूंगा।" ज्यों ही वह कुटिया के भीतर गया, उस महान तेजस्वी वीर पुरुष को देखता ही रह गया। एक सिहरन-सी उसके सम्पूर्ण शरीर में हुई। वह मूर्तिवत बना उस महान तेजस्वी पुरुष को एक नज़र देखता ही

**१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना जीरकपुर-१४०६०३*

रहा। एक आलौकिक नूर था, प्रकाश था, आभा थी गुरु जी के चेहरे पर।

माधोदास एक अदृश्य शक्ति से खिंचा हुआ बेबस-सा होकर गुरु जी के चरणों पर गिर पड़ा। चरणों का स्पर्श पाकर उसके शरीर में आत्मिक शांति, प्रेम और शक्ति की लहरें दौड़ गईं। ऐसे लगा मानो शौर्य और वीरता की लहरों ने इसे स्पर्श किया हो। तंत्र-विद्या के ज्ञाता माधोदास की सम्पूर्ण तांत्रिक विद्या पता नहीं कहां उड़नछू हो गई। वह विस्मादी अवस्था में पहुंच गया। माधोदास वैरागी आत्मिक रस की अनुभूति प्राप्त कर, संत-सिपाही का स्पर्श पा आत्मिक मंडल में पहुंच गया; उसका अहं समाप्त हो गया, हउमै दूर हो गई। गुरु जी का वरद हाथ उसके विभूतियों से लथपथ शरीर और सिर पर फिर रहा था, जो प्रेम-स्पर्श द्वारा जीवन-शक्ति का संचार कर रहा था :

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी ॥ *(पन्ना २०४)*

"तू कौन है?" मुस्करा कर गुरु जी ने पूछा।

रसमग्न हो माधोदास गुरु-चरणों पर गिर पड़ा। वह भूल गया कि वह कौन है, उसका नाम क्या है। "मैं . . . बंदा, मैं . . . बंदा, मैं तेरा बंदा" ये शब्द निरंतर उसके मुंह से निकलने लगे। गुरु जी उसकी इस प्रेम-भावना को लेकर आनंद-विभोर हो गए—"तू बंदा, मैं तैनूं कीता बुलंदा, बुलंदा, बुलंदा।"

उसकी सुप्त आध्यात्मिक शक्तियों को नया दिशा-निर्देशन मिला। ज्योतिर्मय गुरु जी के चरणों के स्पर्श और उचित मार्गदर्शन से वह ज्योतिर्मय हुआ, जैसे चुंबक के स्पर्श से सोना कुंदन बन जाता है, जैसे नूर नूर का स्पर्श पाकर नूरो-नूर हो जाता है। गुरु जी की शिक्षा से वह हठयोग हार गया। गुरु जी ने उसे वास्तविक योग के अर्थ समझाए। वास्तविक योग शारीरिक संयम और मानसिक बल है, सांसारिक विषय-विकारों पर काबू पाना है। उसे राजयोग के मार्ग पर अग्रसर किया। वह सब कुछ छोड़कर गुरु जी की संगत में रहने लगा। गुरु जी के साथ शिकार खेलने जाते समय पुरानी स्मृतियां आंखों के सामने कौंध गईं जब उसका नाम था लछमन दास—मजबूत, तगड़ा, लम्बा, डीलडौल, शिकार का शौकीन। तीरअंदाजी, घुड़सवारी में प्रवीण, बंदूक चलाने में कोई उसका सानी नहीं। एक दिन जंगल में शिकार खेलने गया तो उसके तीर से एक हिरणी मारी गई जो गर्भवती थी। उसके पेट में से दो बच्चे जन्मे जो उसकी आंखों के सामने तड़प-तड़प कर दम तोड़ गए। इस हृदयबेधक घटना ने उसके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। वह घर-बार छोड़ कर वैरागी बन गया। अनेक साधू-संतों की संगत ने उसे पूर्णतया वैरागी बना दिया और उसका नाम पड़ गया माधोदास वैरागी। तांत्रिक विद्या में सिद्धि प्राप्त कर नांदेड़ में गोदावरी के किनारे डेरा बना लिया। उसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई।

माधोदास वैरागी के बारे में गुरु जी ने सुना और उसकी सुप्त शक्तियों को जागृत करने और उचित दिशा-निर्देशन के लिए वे नांदेड़ की ओर चल पड़े। विभूतियों के रंग से रंगे माधोदास को गुरु जी ने प्रभु के रंग में रंग दिया। शस्त्रों का अभ्यास करना उसकी दिनचर्या का अंग बन गया, जीवन परिवर्तित हो गया, अमृत-पान किया, नाम पड़ा 'सरदार गुरबख्श सिंघ'। मगर इतिहास में वे बाबा बंदा सिंघ

बहादर के नाम से प्रसिद्ध हुए।

गुरु जी के संसर्ग में पंजाब की राजनैतिक अवस्था, मुगलों के अत्याचारों, साहिबजादों की शहीदियों, सिखों के कत्लेआम के दुखड़े सुने तो उसका मन पुकार उठा, पुराना वीर मन जागृत हुआ। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी द्वारा प्रारंभ हुई अत्याचार के विरुद्ध लड़ाई में वह भी कुछ सहयोग दे सके, जीवन को पंथ के लेखे लगा सके, इस धर्म-युद्ध में योगदान दे सके, ऐसी बातें सोचते हुए अन्यायियों को सबक सिखाने के लिए उसका मन छटपटाने लगा। गुरु जी के चरणों में सर्वस्व न्यौछावर करने की तमन्ना बलवती हुई। उसके मन में नवीन उत्साह जागृत हुआ। देश-कौम के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने की भावना ने बल पकड़ा। अत्याचार का खातिमा करने के लिए बाजू फड़कने लगे। गुरु जी से कुछ करने की प्रार्थना की।

गुरु जी ने अपनी कमान उसके कंधे पर पहना दी। पांच तीर दिए और कहा कि "ये तुम्हारी ताकत हैं। इन्हें मैं तुम्हें बख्शिश-स्वरूप दे रहा हूं, कठिन समय में तुम्हारे काम आएंगे। तुम्हें पंजाब जाना है। खालसे को जत्थेबंद करना है, जुल्म का अंत करना है। बाबा बिनोद सिंघ, उनका पुत्र कान्ह सिंघ, बाज सिंघ, राम सिंघ, बिजय सिंघ तुम्हारे साथ पंजाब जाएंगे। इनके परामर्श से तुम्हें सभी काम करने होंगे। तुम इनके जत्थेदार होगे, परन्तु इनके परामर्श से ही तुम्हें सारे फैसले लेने होंगे।"

"गुरु जी! मैं इनका पथ-प्रदर्शक कैसे बनूंगा? मैं अनजान व्यक्ति हूं। मुझे बस सेवा प्रदान कीजिए।" बाबा बंदा सिंघ बहादर ने कहा।

गुरु जी ने कहा, "तुम्हारा सही पथ-प्रदर्शक तुम्हारी बंदगी होगी। निष्काम सेवा का उत्तरदायित्व लेकर जा रहे हो। ऐश्वर्य में मत डूबना। जीवन संयमित रखना। इन्द्रियों के भोग-विलास में मत पड़ना। ध्यान प्रभु-चरणों में लगाए रखना। आन्तरिक नाद से जीवन-यात्रा सुलभ हो जाती है। यही वास्तविक योग है। इन आदर्शों पर चलते रहोगे तो सफलता तुम्हारे कदम चूमेगी। कठिनाई के समय अरदास करके इन बख्शिश-स्वरूप तीरों में से तीर चलाना, सफलता मिलेगी।"

बाबा बंदा सिंघ बहादर ने कहा, "गुरु जी! आपने जो काम मुझे सौंपा है अत्यन्त कठिन है। मैं डरता हूं कि इतना बड़ा उत्तरदायित्व निभा पाऊंगा या नहीं। मैं तो आपके चरणों में रह कर बंदगी करना चाहता हूं।"

गुरु जी ने कहा, "पाप और अत्याचार के खातिमे के लिए युद्ध करना वास्तविक बंदगी और सिमरन है। मन हरि-सिमरन में लगा रहे और हाथ जुल्म के खातिमे के लिए लड़ते रहें, यही वास्तविक बंदगी है। मानव-पीड़ा आसमान को छू रही है। पंजाब में हजारों बेगुनाहों के खून से धरती रंगी जा रही है। देश परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है। जाओ, खालसा को संगठित कर स्वतंत्रता के आहवान की रणभेदी बजा दो। तुम वीर पुरुष हो। संत-सिपाही बन अत्याचार और जुल्म का खातिमा करो। अन्यायियों से बदला लो। पीर बुधूशाह मेरा प्यारा, बेदर्दी से कत्ल हुआ है। उसकी बेगम नसीरा, संत कवि, गीत गाती, नाद बजाती शहीद हुई है। उसके कैदी बच्चों को छुड़ाने के लिए सरहिंद फतह करो। तुम्हें साहिबजादों की शहादत के जिम्मेवार हाकिमों को भी सबक सिखाना है। अनंदपुर साहिब की खबर भी लेनी है।"

बाबा बंदा सिंघ बहादर के जाने की

तैयारी होने लगी। कीर्तन हुआ। अरदास हुई— "हे वाहिगुरु! आप जी द्वारा सुसज्जित आपका सिंघ धर्म-युद्ध की खातिर जा रहा है। यह धर्म-युद्ध करेगा। इसे चढ़दी कला में रखना। इसे अपने उद्देश्य में सफलता प्रदान करना।" कड़ाह परसाद बांटा गया। घोड़े आ गए। एक-एक घोड़ा और एक-एक बंदूक सबको प्रदान की गई।

गुरु जी ने बाबा बंदा सिंघ बहादर से कहा, "जाओ मेरे खालसा जी! वाहिगुरु की आज्ञा का पालन करना। धर्म और अन्याय का सफाया करना।"

वह शूरवीर योद्धा, जो कुछ समय पूर्व वैरागी बन, भस्म रमाए गोदावरी के किनारे तपस्या कर रहा था, आज योद्धा के रूप में गुरु का सिख बनकर सुसज्जित खड़ा था। चेहरे पर चढ़दी कल का सूर्य दमक रहा था। नैयनों में से झलकता उत्साह, बलवान डील-डौल, रोबीला चेहरा एवं अंग-अंग से शौर्य टपक रहा था। हाथ जोड़े खड़ा है। प्यारे गुरु जी से बिछुड़ने का मन नहीं करता। कंठ गदगद है। शरीर पुलकित है। आंसू भर-भर बह रहे हैं। चरणों पर गिर पड़ता है। गुरु जी आलिंगनबद्ध करते हैं, "जाओ, हुक्म की कार करो। जब तक हुक्म की कार करोगे मैं तुम्हारे अंग-संग रहूंगा। तलवार उठाना मेरी भी मजबूरी थी और आज तुम्हारी भी, क्योंकि अत्याचारियों, जालिमों एवं दूसरों का धर्म भ्रष्ट कर उनकी जिंदगी में खलल डालने वालों को शोधने के लिए जब सारे साधन विफल हो जाएं तो तलवार उठाना आवश्यक हो जाता है।"

चु कार अज़ हमह हीलते दर गुज़शत ॥
हलालस्सत बुरदन ब शमशीर दसत ॥

(ज़फरनामा पा: १०)

कविता

दिल की पुकार

बेटा और बेटी में न, फर्क कोई समझिये,
दोनों से ही खिले, फले-फूले परिवार जी।
चाहते हो यदि आप, पूरा परिवार लोगो,
बेटे साथ बेटी को भी, करो स्वीकार जी।
मां-बाप का ही दिया, बेटियां हैं लेती भाई,
फिर भी न अच्छा पायें, क्यों व्यवहार जी?
स्त्री की कोख में से, सभी हैं जन्म लेते,
क्यों न फिर देते उसे, उचित सत्कार जी?

कोख में से रत्न अनेकों, आये दुनिया में,
गिनती न गिनी जाए, जाऊं बलिहार जी।
रचना की भिन्न-भिन्नता रहे बनी,
नर-नारी दोनों, मिल बांटते बहार जी।
स्त्री की कोख में से, सूरमे जन्म लेते,
स्त्री को क्षमता, बख्शी करतार जी।
भ्रूण-हत्या आज से न, करे कोई भूल कर,
यही 'भौर' उठती है, दिल से पुकार जी।

-कवीशर स्वर्ण सिंघ भौर, गांव व डाक सरली कलां, जिला तरनतारन (पंजाब)। मो ९४१७८-५३६९३

हम धन्यवाद करते हैं स. बलबीर सिंघ, अध्यक्ष गुरु नानक मिशन हायर सेकेंडरी स्कूल, मेहर (सतना) का जिन्होंने २८ परिवारों को 'गुरमति ज्ञान' के आजीवन सदस्य बनाया तथा श्री हरिचंद स्नेही, सोनीपत का जिन्होंने ५० परिवारों को 'गुरमति ज्ञान' के वार्षिक सदस्य बनाया। हम अकाल पुरख वाहिगुरु से उक्त सज्जनों की चढ़दी कला के लिए अरदास करते हैं।

-संपादक।

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-२३

अभिमान त्याग विनम्र बनने वाला—चंदन कवि

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ साहिल**

चंदन कवि के दशमेश पिता के दरबार में आने और दरबारी कवियों में शामिल होने के प्रसंग से एक बड़ी ही रोचक घटना जुड़ी हुई है। चंदन एक ब्राह्मण वंश से संबंध रखता था और अच्छा कवि भी था। इन दोनों बातों का चंदन को बड़ा अहंकार था। उसने श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के विद्या-दरबार के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था, इसलिए वह घमंड में भरा गुरु जी के विद्वानों-कवियों को नीचा दिखाने के उद्देश्य से गुरु जी के दरबार में आया। इस घटना का वर्णन भाई कान्ह सिंघ नाभा कृत 'महान कोश' एवं भाई वीर सिंघ कृत 'कलगीधर चमत्कार' में इस प्रकार किया गया है :

एक दिन दशमेश पिता श्री कलगीधर विद्वानों की सभा लगाये विराजमान थे। बड़े-बड़े विद्वान और कवि सभा में उपस्थित थे। काव्य और दर्शन पर गंभीर चर्चा चल रही थी। इतने में एक कवि का वहां आगमन हुआ। इस कवि का नाम चंदन था। जब भेंट हो चुकी तो गुरु जी ने पूछा, "कवि जीओ! किस प्रकार आगमन हुआ?"

चंदन कवि गुरु जी का प्रश्न सुनकर कहने लगा, "आपका यश बहुत सुना है, आपके गुणों की देश में घर-घर कीर्ति हो रही है। आपने धर्म की लाज रखी है। आपने प्रजा की पालना और रक्षा की है। आप धन्य हो। आपकी विद्या की कद्रदानी की भी बड़ी प्रशंसा हो रही है। आपके दरबार के कवियों और विद्वानों की भी बड़ी महिमा गाई जा रही है। मैं इसलिए आया हूं कि देखूं, क्या आपके कवि-कोविद मेरे एक सवैये को समझ पाते हैं या नहीं?"

गुरु जी चंदन की गुण-गर्वित अवस्था सुनकर मुस्कराये और बोले, "कवि जी! अपनी रचना सुनाओ . . .।"

कवि चंदन ने अपना सवैया इस प्रकार पढ़ा :

नव सात तिये नव सात किये, नव साति पिये नव सात पियाए।
नव सात रचे नव सात बदे, नव सात पिया पहि दायक पाये।
जीत कला नव सातन की, नव सातन के मुख अंचर छाए।
मानहुं मेघ के मंडल में, कवि चंदन चंद कलेवर छाए।

यह सवैया सुनकर दशमेश पिता फिर मुस्कराये और बोले :

इस जैसनि के अरथ बिचारन।
हमरे घाही करैं उचारन।

यह सुनकर चंदन कवि आश्चर्यचकित रह गया कि मेरे ऐसे प्रगल्भ सवैये के अर्थ 'घाही' (घास छीलने वाले) भी समझ सकते हैं। अहंकार का मारा गुरु जी से बोला कि फिर तो कोई 'घाही' ही इसके अर्थ करने के लिए बुलाया जाये।

*१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना)-१४११०१

गुरु जी ने चोबदार को हुक्म दिया, "भाई धन्ना सिंघ को बुला लाओ।"

कुछ ही देर में भाई धन्ना सिंघ हाथ में खुर्पा और कंधे पर पल्ली डाले हाजिर हो गया। गुरु जी ने आज्ञा दी—"भाई धन्ना सिंघ! इन कवीश्वर का सवैया सुनो और उसका अर्थ करो।"

चंदन कवि ने सवैया फिर सुनाया। भाई धन्ना सिंघ ने सवैया सुना और बोला, "हे पातशाह! इस सवैये में कोई ऊंचा ख्याल या विचार तो नहीं है, फिर भी मैं इसका अर्थ कहता हूं।"

"नव सात यानी नौ और सात हुए सोलह। सोलह बरस की एक कन्या ने सोलह सिंगार किये हैं। उसका सोलह साल का पति सोलह महीने बाद परदेस से वापस आया है। सोलह घरों वाली खेल यानी चौंपड़ की बाजी लगाई गई है जिसमें सोलह दांव की शर्त लगाई गई है। सोलहवें दांव में पति ने बाजी जीत ली। इसलिए सोलह कला वाले चंद्र जैसे मुख वाली कन्या ने आंचल में मुंह ऐसे छुपा लिया है मानो चांद बादलों के पीछे छुप गया हो।"

यह अर्थ सुन कर चंदन कवि शर्मिंदा हो गया, परंतु अपने आप को संभालता हुआ गुरु जी की विद्वता की प्रशंसा करने लगा।

गुरु जी चंदन की चालाकी भांप गये और उसके गर्व का पूरा खंडन करने के उद्देश्य से भाई धन्ना सिंघ से बोले कि "भाई धन्ना सिंघ! आप भी कविता करते हो। आप भी अपनी कोई ऐसी सुंदर रचना सुनाओ जो कवि जी को समझ में आ सके।" तब भाई धन्ना सिंघ ने अपना सवैया "मीन मरे जल के परसे" सुनाया :

मीन मरे जल के परसे कबहूं न, मरे पर पावक पाए।
हाथी मरे मद के परसे कबहूं न, मरे तन ताप के आए।
तीय मरे पिय के परसे कबहूं न, मरे परदेस सिधाए।
गूढ़ बात मैं कही दिजराज, बिचार सके न बिना चित लाए।
कउल मरे रवि के परसे कबहूं न, मरे सासि की छबि पाए।
मित्र मरे मित के मिलबे कबहूं न, मरे जब दूर सिधाए।
सिंघ मरे जब मास मिले कबहूं न, मरे जब हाथ न आए।
गूढ़ बात मैं कही दिजराज, बिचार सके न बिना चित लाए।

यह सवैया सुन कर चंदन कवि हतप्रभ रह गया। जब उसे काफी देर तक कुछ समझ न आया तो गुरु जी से आज्ञा लेकर भाई धन्ना सिंघ ने अर्थ समझाया कि *'कबहूं न'* को पहली पंक्ति के साथ जोड़ कर पढें अर्थ स्पष्ट हो जायेगा, जैसे *"मीन मरे जल के परसे कबहूं न, मरे पर पावक पाए।"*

अब तक चंदन कवि का गर्व पूरी तरह खंडित हो चुका था। अब वह विनम्रता से बोला, "पातशाह! ज्ञान पर अभिमान का बूर छा ही जाता है। मेरे पर तो विद्या-अभिमान के साथ-साथ जाति-अभिमान भी छा गया था। क्षमा करो और मुझ पर कृपा करो।" गुरु साहिब चंदन कवि की आत्मालोचना से प्रसन्न हुए और उसे वृत्ति देकर कवि-समुदाय में शामिल कर लिया।





आस्ट्रेलिया में भारतीय विद्यार्थियों पर हुए हमले चिंताजनक : जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर : ३१ मई। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने आस्ट्रेलिया के मेलबोर्न शहर में भारतीय मूल के विद्यार्थियों पर वहां के स्थानीय नागरिकों द्वारा किए गए हमलों पर चिंता प्रकट करते हुए कहा कि ऐसी दुखद कार्यवाहियों से भारत के समूह देशवासियों में रोष तथा आक्रोश पाया जा रहा है।

यहां से जारी एक प्रेस रिलीज में उन्होंने कहा कि २१वीं सदी में आस्ट्रेलिया जैसे सभ्यक देश के नागरिकों को ऐसी कार्यवाहियां शोभा नहीं देतीं। उन्होंने कहा कि आज के ग्लोबलाइजेशन के युग में ऐसी कार्यवाहियां मानवी मान्यताओं एवं सभ्यता को ठेस पहुंचाती हैं। उन्होंने कहा कि ऐसी कार्यवाहियां चाहे आपराधिक पृष्ठभूमि वाले लोगों द्वारा ही की गई हों लेकिन इसका खमियाजा समूह राष्ट्र को शर्मसार होकर भुगतना पड़ता है। उन्होंने कहा कि भारतीय लोगों द्वारा आस्ट्रेलिया की उन्नति के लिए की जा रही सख्त मेहनत से प्रेरणा लेते हुए आस्ट्रेलिया के लोगों को अपने देश के विकास के लिए स्वयं भी काम करना चाहिए और मानवी भाईचारे में परस्पर प्रेम-प्यार बढ़ा कर ऊंची कदरों-कीमतों पर पहरा देना चाहिए। उन्होंने आस्ट्रेलिया में रह रहे समूह भारतीयों को अपील की है कि वे ऐसे नाजुक मौके पर कानून के दायरे में रह कर दृढ़ता से अपनी मेहनत में विश्वास रखें तथा अपनी मंजिल की तरफ बढ़ते रहें, समूह भारतवासियों की शुभकामनाएं उनके साथ हैं। उन्होंने प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ से भी अपील की कि वे इन हमलों के कारणों की तह तक जाएं तथा भारतीयों की जान-माल की सुरक्षा विश्वसनीय बनाने के लिए आस्ट्रेलिया सरकार पर जोर डालें।

साका १९८४ की २५वीं वर्षगांठ मनाई

अमृतसर : ६ जून। भारत सरकार द्वारा जून १९८४ में श्री अकाल तख्त साहिब पर करवाए गए फौजी आक्रमण की २५वीं वर्षगांठ मनाई गई। इस अवसर पर शहीदों को श्रद्धांजलि देते हुए श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने सिख पंथ के नाम जारी अपने संदेश में कहा कि सारी कौम शहीदों से प्रेरणा लेकर गुरु-घरों की मान-मर्यादा हेतु बाणी तथा बाणे के धारक बने। उन्होंने समूह सिख संप्रदायों तथा पंथक दलों को एकजुट होकर सिख धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए प्रयत्न करने के लिए कहा। उन्होंने कहा कि मुगल काल से लेकर अंग्रेजों के समय तक सिखों पर ढाये गए जुल्मों की दास्तां बहुत लम्बी है। जून १९८४ में अपने ही देश में, अपने ही देश की सरकार द्वारा गुरु-घर में आई संगत को भारतीय सेना के माध्यम से गोलियों-बमों से भून डालना शर्मनाक घटना है। उन्होंने कहा कि बहुत से लोगों को पकड़ कर जेलों में डाल दिया, जिनमें से कई लोग आज भी जेलों में बंद हैं। दूसरी तरफ नवंबर १९८४ में दिल्ली तथा अन्य स्थानों पर हुए सिख कत्लेआम के दोषियों को

आज तक सजा दिलाने में हमारी सरकारें नाकाम रही हैं। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि उस समय के दौरान सिख फौजियों द्वारा सेना से भाग कर आने पर शिरोमणि गु: प्र: कमेटी ने उनकी हर संभव सहायता की है। इस अवसर पर शहीद सिंघों के परिवारों को सिरोपाओ देकर सम्मानित किया गया।

इस श्रद्धांजलि समारोह में भारी संख्या में संगत एकत्र थी। शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ के अलावा तख्त श्री केसगढ़ साहिब के जत्थेदार सिंघ साहिब ज्ञानी तिरलोचन सिंघ, श्री हरिमंदर साहिब के ग्रंथी साहिबान, सिख संप्रदायों के मुखी साहिबान तथा शिरोमणि कमेटी के अधिकारी-कर्मचारी भी इस समारोह में शामिल हुए।

साका १९८४ की २५वीं वर्षगांव मौके खूनदान कैंप लगाया गया

अमृतसर : ६ जून। जून १९८४ में श्री हरिमंदर साहिब पर हुए फौजी हमले की २५वीं वर्षगांव के अवसर पर अकाल पुरख की फौज, अमृतसर द्वारा श्री हरिमंदर साहिब के अलावा देश में अलग-अलग २५ जगहों पर खूनदान कैंप लगाये गये।

श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर परिसर के बाहर खूनदान कैंप का उद्घाटन श्री अकाल तख्त साहिब के जत्थेदार ज्ञानी गुरबचन सिंघ, तख्त श्री केसगढ़ साहिब के जत्थेदार ज्ञानी तिरलोचन सिंघ तथा शिरोमणि कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने किया। अकाल पुरख की फौज के मुखिया स. जसविंदर सिंघ एडवोकेट सदस्य शिरोमणि कमेटी तथा प्रवक्ता स. हरप्रीत सिंघ ने बताया कि अमृतसर के अलावा गुरदासपुर, होशियारपुर, कपूरथला, भुलत्थ, गंगानगर, करनाल, टाटानगर, कलकत्ता, भोपाल, नागपुर तथा बंगलौर आदि शहरों में भी खूनदान कैंप लगाये गये। उन्होंने कहा कि कलकत्ता यूनिट द्वारा एकत्र किए गए खून को पश्चिम बंगाल में आए समुद्री तूफान में जख्मी हुए लोगों को उपलब्ध कराने का यत्न किया गया है।

ऐतिहासिक थेह और अजायब घर तैयार किया जाएगा : जत्थेदार अवतार सिंघ

फतेहगढ़ साहिब : २९ मई। गुरु काशी दमदमा साहिब, तलवंडी साबो (बठिंडा) में ग्रंथी सिंघों के लिए पांच वर्षीय स्पेशल कोर्स शुरू किए जा रहे हैं, जिसमें अंग्रेजी भाषा को प्राथमिकता दी जाएगी। इन विचारों का प्रकटावा जत्थेदार अवतार सिंघ ने फतेहगढ़ साहिब में धर्म प्रचार कमेटी की हुई मीटिंग के बाद किया। उन्होंने कहा कि फतेहगढ़ साहिब में निर्माणाधीन श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनीवर्सिटी के लिए १० करोड़ रुपए और स्वीकृत किए गए हैं। बाबा बंदा सिंघ बहादर द्वारा सरहिंद फतह के चिन्ह 'थेह' के प्राचीन रूप को बहाल करने के लिए नक्शा चंडीगढ के एक सीनीयर आर्किटेक्ट (अटैलियर) से तैयार करवाया गया है। उन्होंने कहा कि इसके साथ एक अजायब घर तथा यादगारी स्मारक भी तैयार किया जाएगा।



प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०७-२००९